ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

रविवार,7 अप्रैल 2013

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 7 अप्रैल, 2013 से 13 अप्रैल, 2013

चैत्र कृ.12 ● वि० सं०–2069 ● वर्ष 77, अंक 52, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,113 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. उर्वरक नगर, बरौनी ने मनाया ऋषि बोध उत्सव

डी.ए.वी. बरौनी में ऋषि बोधोत्सव उत्साह पूर्वक मनाया गया।

प्राचार्य श्री मुकेश कुमार ने अतिथि गण एवं शिक्षक गण के साथ दीप प्रज्ज्वलित कर कार्यक्रम का उद्घाटन किया। इस अवसर पर वैदिक मंत्रोच्चारण करते हुए सामूहिक हवन सम्पन्न किया गया। हवन भजन के पश्चात् छात्र–छात्राओं ने ''ओ३म् है जीवन हमारा'' गीत गाकर वातावरण को भक्तिपूर्ण बनाते हुए यह भाव अभिव्क्त किया कि ''ओ३म् के गुरु मंत्र जपने से रहेगा शुद्ध मन'' ज्ञान एवं बुद्धि की वृद्धि के लिए गायन किया।

मुख्य अतिथि आचार्य उमाशंकर शास्त्री ने कहा कि कुरीतियों की धुंध में जकड़े भारतीय समाज को स्वामी दयानंद ने नई दिशा व दशा दी।

आर्य समाज, गढहरा के प्रधान तथा बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा के सदस्य प्रेम कुमार पिंटु , डा. निश्चल कुमार तथा राजेश कुमार ने वेद व शिक्षा के संबंधों की विस्तार से चर्चा की।

विद्यालय के प्राचार्य श्री मुकेश कुमार ने कहा कि ज्ञान का उपयोग समाज के उत्थान हेतु करना ही स्वामी दयानंद के आदर्शो का पालन है।

श्री रामशंकर सिंह ने धन्यवाद ज्ञापित करते हुए कहा कि इस कार्यक्रम को सफल तभी माना जाएगा जब इसे कार्यरूप में परिणत करेंगे।

डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अबोहर ने मनाया ऋषि जन्मोत्सव

डी.ए.वी. महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन एवम् विचारों को भावी अध्यापकों व अध्यापिकाओं तक पहुँचाने ऋषि जन्मोत्सव का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ वैदिक हवन यज्ञ से किया गया, जिसके मुख्य यजमान (डॉ) श्रीमती सरोज मिगलानी तथा डॉ. सुशील रत्न मिगलानी जी थे। आर्य परिषद् की प्रभारी डॉ (श्रीमती) उर्मिला सेठी जी ने मन्त्रों का सस्वर मधुर व प्रभावशाली उच्चारण किया। इस हवन–यज्ञ व कार्यक्रम में महाविद्यालय के बी. एड, ई.टी.टी. व एम.एड के सभी विद्यार्थी उपस्थित थे। समूह स्टाफ के साथ–साथ अन्य डी.ए.वी. संस्थाओं के प्राचार्य तथा प्राध्यापक वर्ग भी उपस्थित थे।

महाविद्यालय के विशाल कक्ष में छात्रों द्वारा बनाया गया ऋषि दयानन्द जी के सुन्दर चित्र व सत्यार्थ प्रकाश से उद्धृत सूक्तियों का प्रदर्शन किया गया। निशा, मीनू, गया। हिना तथा नीरू ने अपने विचार प्रस्तुत किए। इसके उपरान्त वैदिक ज्ञान परीक्षा, फाजिल्का द्वारा वैदिक ज्ञान परीक्षा में विजेता बच्चों को सम्मानित किया गया।

महाविद्यालय की प्राचार्या तथा डी.ए.वी. महाविद्यालय, अबोहर, के प्राचार्यो ने विजेताओं को पुरस्कृत किया।

शिक्षा महाविद्यालय प्राचार्या डा.(श्रीमती) विनीता सिंह जी ने अपने जीवन सम्बोधन में दयानन्द जी से प्रेरणा लेकर उनके विचारों को अपने जीवन में उतारने के लिए प्रेरित किया। तथा विद्यार्थियों को आगामी वार्षिक परीक्षाओं के लिए शुभकामनाएँ दी।

डी.ए.वी. दरीबा (राजसमन्द) ने किया जल–संरक्षण चेतना रैली का आयोजन

डी.ए.वी. एच. जैड. एल. सी सै. स्कूल, दरीबा द्वारा जल–संरक्षण चेतना रैली का आयोजन किया गया। जल चेतना रैली को श्री मनोज सोनी–वाइस प्रेसिडेन्ट इकाई प्रमुख डी.ए.वी. श्री रमेश दाधीच, उपाध्यक्ष–दरीबा खान मजदूर संघ मेहन्दुरिया सरपंच, श्री मदन सिंह तंवर एवं श्री नन्दलाल कोठारी, सचिव, दरीबा खान मजदूर संघ, के द्वारा हरी झण्डी दिखाकर रवाना किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ की ओर से वर्ष 2013 को जल बर्ष के रूप में मनाने की घाोषणा किए जाने पर डी.ए.वी. एच.जेड. एल विद्यालय ने ''प्रोजेक्ट बूँद'' के तहत जल संरक्षण रैली निकाली।

यह रैली डी.ए.वी. स्कूल परिसर से आरम्भ से कर विभिन्न कॉलोनियों

वेदान्त विहार, बैक चौराहा तथा सामुदायिक भवन के सामने से गुजरते हुए पुनः विद्यालय परिसर में

शेष पृष्ठ 12 पर

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 07 अप्रैल, 2013 से 13 अप्रैल 2013

मनोबल, सत्य, यश, श्री

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

मनसः काममाकूतिं, वाचः सत्यमशीय।
पशूनां रूपमन्नस्य रसो, यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा।।

यजु ३९.४

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(मनसः)** मन की **(कामं)** इच्छा–शक्ति को [तथा] **(आकूतिं)** संकल्प–शक्ति को [और] **(वाचः)** वाणी के **(सत्यं)** सत्य को **(अशीय)** प्राप्त करूं। **(पशूनां)** पशुओं का **(रूपं)** रूप, **(अन्नस्य)** अन्न का **(रसः)** रस, **(यशः)** कीर्ति [और] **(श्रीः)** श्री **(मयि)** मुझमें **(श्रयतां)** स्थित हो। **(स्वाहा)** एतदर्थ आहुति देता हूं, सत्क्रिया करता हूं।

मैं चाहता हूं कि मैं एक उत्कृष्ट मानव बनूं, मेरे अन्दर विविध शक्तियाँ अपने पूर्णरूप में निवास करें। मेरे मन के अन्दर प्रबल इच्छा शक्ति (काम) और संकल्प शक्ति (आकूति) हो। मानव इच्छाएं करता रहता है, परन्तु वे पूर्ण नहीं होतीं, यह इच्छा शक्ति की दुर्बलता का चिन्ह है। योगी जन बताते हैं कि इच्छा शक्ति को बलवान् बना लेने पर मनुष्य जो इच्छा करता है वह पूर्ण होकर रहती है। वह इच्छा करता है कि अमुक पापी धर्मात्मा बन जाए, या अमुक रोगी का रोग दूर हो जाए, तो सचमुच वैसा ही हो जाता है। मन की दूसरी शक्ति संकल्प शक्ति है। संकल्प की दृढ़ता होने पर मनुष्य अपने व्रत से च्युत नहीं होता। जो व्रत एक बार धारण कर लेता है, अन्त तक उसका निर्वाह करता है। यदि वह संकल्प करता है कि मैं आज से ब्रह्मचारी रहूंगा, तो उस पर दृढ़ रहता है। यदि वह संकल्प करता है कि मैं आज से धूम्रपान करना छोड़ता हूं, तो सचमुच उसका यह व्यसन छूट जाता है। इसके विपरीत जिनमें संकल्प शक्ति की दृढ़ता नहीं होती, वे नित्य नवीन–नवीन संकल्प करते हैं, और किसी न किसी बहाने उन्हें तोड़ते रहते हैं।

मेरी यह भी कामना है कि मेरी वाणी में सत्य हो। वाणी में सत्य तभी आ सकता है, यदि मन में भी सत्य हो। यदि मन में सत्य होगा, तो वह कर्म में भी आयेगा। इस प्रकार मनसा, वाचा, कर्मणा मैं सत्यमय हो जाऊं, यह मेरी आन्तरिक अभिलाषा है। पतंजलि मुनि ने कहा है कि जिसके अन्दर सत्य प्रतिष्ठित हो जाता है, उसे क्रिया–फलाश्रयत्व प्राप्त हो जाता है, उसकी वाणी अमोघ हो जाती है। उसकी वाणी से दिये गये आशीर्वाद सत्य सिद्ध होते हैं। मेरी वाणी में भी यह दिव्य शक्ति आये।

मेरी यह भी अभिलाषा है कि मुझे गाय आदि दुधारू पशुओं का दूध यथेच्छ मात्रा में मिले, जिससे उसके सेवन से प्राप्त होनेवाला सौन्दर्य मुझमें आये। मुझे सात्त्विक अन्नों से मिलनेवाला रस–रक्त भी प्राप्त हो। मुझे धर्म और सत्कर्म से प्राप्त होनेवाली कीर्ति भी मिले और मेरी श्री, मेरी शोभा, दिग्दिगन्त में फैले। उक्त सब कामनाओं और आदर्शों की पूर्ति के लिए 'स्वाहा' हो, सत्क्रियाओं और सत्यप्रयासों की निरन्तर आहुति पड़ती रहे। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

घोर घने जंगल में

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में शरीर का ध्यान रखने की बात करते हुए कहा कि यह मत भूलो कि यह शरीर उस आत्मा के लिये है जिसका परमात्मा के अतिरिक्त कोई साथी नहीं। एक साधु और घुड़सवार की कहानी सुनाकर शरीर की उन्नति करने की बात कहीं और कहा कि स्वामी दयानन्द भी इसकी निन्दा नहीं करते लेकिन आवश्यकता इस बात की है इस शरीर के भीतर बैठे आत्मा का भी ध्यान किया जाए।

शरीर देवताओं का यज्ञ स्थान है। वेद में इसे सुन्दर दिखाई देने वाली किश्ती कहा है। आवश्यकता है कि चलाया जाय। काशी के पण्डितों की कहानी सुनाई, भांग के नशे में, जो सारी रात चप्पू चलाते रहे पर सुबह नाव काशी में ही थी। शरीर प्रभु की रचना का चमत्कार है। इसका प्रत्येक अंग आवश्यक और मूल्यवान है। लाहौर में एक उद्यान में रहने वाले एक फकीर का प्रसंग सुनाया जिसके दोनों बाजू नहीं थे और कहा शरीर की निन्दा मत करो, यह तो अनमोल रत्न है। इसका प्रत्येक अंग विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए बना है। वाणी क्यों मिली है। इसकी चर्चा के बाद मानसिक तप की बात शुरू करते हुए स्वामी जी ने कहा– 'मन को प्रसन्न रखो। इसे बुरे विचारों का अड्डा मत बनने दो।

अब आगे.....

श्रीनगर में दीवान बंशीधर जी इन्जीनियर रहते थे। अब तो उनका देहान्त हो गया। उनकी पत्नी ने मुझे एक घटना सुनाई। मैं तो चकित रह गया। वे श्रीनगर से दिल्ली आ रहीं थीं। पठानकोट से रेलगाड़ी में बैठीं, प्रथम श्रेणी के डिब्बे में। जालन्धर का स्टेशन आया तो एक सुन्दर–सी युवती उस डिब्बे में आ गई। किसी बहुत अच्छे घर की लड़की प्रतीत होती थी वह। बहुत बढ़िया रेशमी साड़ी उसने पहन रखी थी। हाथों में सोने की चूड़ियाँ थीं, सोने का हार, उसके गले में। ऐसा प्रतीत होता था कि कोई नवविवाहिता देवी है, अपने मैके या ससुराल जा रही है। डिब्बे में आकर थोड़ी देर बैठी, नन्दा जी की धर्मपतनी को देखती रही, तब बोली, "आप बुरा न मानिये, मैं जो बार–बार आपकी ओर देखती हूँ तो इसलिए आपका रंग–रूप बिल्कुल मेरी माता जी के समान है। वे अब हैं नहीं, जब थीं तब बिल्कुल आप–जैसी लगती थीं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरी माँ ही मेरे सामने बैठी है।"

कुछ ऐसे दर्द भरे कण्ठ से उसने यह बात कही कि नन्दा जी की पत्नी का मन भर आया; "शक्लें कभी–कभी मिल भी जाया करती हैं, बेटा!"

उस लड़की ने कहा, "आप तो बेलती भी मेरी माँ की भाँति हैं। वह भी मुझे बेटी नहीं, बेटा कहती थीं। मेरा जी चाहता है आपको माँ कहूँ।"

वे बोलीं, "अवश्य कह बेटा! मैंने रोका तो नहीं।"

और वह लड़की उनके पास आकर बैठ गई; बोली, "बहुत अच्छी हो तुम मेरी माँ! ऐसा लगता है अपनी बेटी के आँसू तुमसे देखे नहीं गए। तुम वापस आ गई हो। अच्छा माँ जी, इधर आओ मैं आपका बिस्तर कर दूँ।"

और स्वयं ही उनका बिस्तर खोलकर, सीट पर बिछाकर, उन्हें लिटाकर वह उनके पाँव दबाने लगी, बोली, "मैं सदा अपनी माँ के पाँव दबाती थी, आपके पाँव भी दबाऊँगी। मुझे थोड़ी देर सेवा कर लेने दीजिये। मेरे मन को शान्ति मिलेगी।"

नन्द जी की पत्नी ने इस विचार से कि इस बिना माँ की बच्ची का दिल न दुखे, उसे रोका नहीं। वह पाँव दबा रही थी तो उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे पाँव से ऊपर टाँग में हल्की मोटी–सी सूई चुभ गई है। उन्होंने जल्दी से पाँव को खींचकर कहा, "क्या है?"

उस लड़की ने उसकी टाँग को मलते हुए कहा, "कुछ नहीं, एक मच्छर बैठा था यहाँ, मैंने उसे हटा दिया।" और तभी वह उठकर उनके सिर के पास आ बैठी; "गर्मी बहुत है, पंखे की हवा ठीक से आती नहीं, मैं अपने दुपट्टे से आपको हवा करती हूँ, आप जाइये।"

पता नहीं उस दुपट्टे में कैसी औषध लगी थी कि थोड़ी ही देर में नन्दा जी की पत्नी को मूर्च्छा–सी (बेहोशी) आने लगी। उन्होंने बताया, "मैं जाग रही थी, हिल नहीं सकती थी, बोल नहीं सकती थी, आँखें भी पूरी तरह नहीं खुलती थीं;

मैं बहुत प्रयत्न से उन्हें खोलती, वे फिर बन्द हो जातीं। तभी मैंने देखा कि लड़की ने ऊपरवाली सीट से मेरा सूटकेस उतारा है। यह भी देखा कि मेरी ही कमर से चाबी निकालकर उसने सूटकेस खोला है। उसमें से मेरे सभी आभूषण निकाल लिये हैं। कुछ बहुमूल्य साड़ियाँ थीं, वे भी निकाल ली हैं। तब सूटकेस को बन्द करके उसने ऊपर रख दिया है और मेरी टोकरी खोलकर उसके अन्दर से चाँदी के बर्तन निकाल रही है। सब–के–सब बर्तन उसने निकाल लिये। आभूषणों को, बर्तनों को, साड़ियों को उसने एक कपड़े में बाँधा, एक गठड़ी–सी बना ली। यह सब कुछ मैं देख रही थी परन्तु बोल नहीं सकती थी, हिल नहीं सकती थी। गठड़ी बाँधकर वह चुपचाप बैठ गई। मैं प्रयत्न कर रही थीं कि उठूँ, परन्तु अपना हाथ भी मुझसे हिलाया नहीं गया। अम्बाला का स्टेशन आया तो उसने डिब्बे का दरवाज़ा खोला। बाहर से दो युवक अन्दर आये। उसने वह गठड़ी उनको थमा दी, फिर स्वयं भी नीचे उतर गई और मैं सब–कुछ देखती रही, एक शब्द भी मैं बाल नहीं सकी।"

यह घटना मैंने सुनी तो फिर चकरा गया। कैसी–कैसी विचित्र बातें इस संसार में होने लगी हैं! कई प्रकार की चालाकियाँ जाग उठी हैं। मनुष्य का मस्तिष्क नित–नई खोजें करने लगा है और प्रत्येक खोज इसलिए कि पाप का घड़ा अधिक–से–अधिक तेज़ी के साथ भरे। यह तो उत्तम बुद्धि नहीं बाबा! यह तो बुद्धि के साथ अत्याचार है।

कुछ दिन पहले मैं चण्डीगढ़ में था। वहाँ एक काफी बड़े सरकारी अफसर रहते हैं। उनके घर में नौकर नहीं था। ढूँढ रह थे, मिलता नहीं था। अन्त में मिला। रख लिया गया। बहुत उत्तम खाना वह बनाता था। परन्तु कुछ ही दिन के पश्चात् वह अफसर महोदय बीमार रहने लगे। ऐसी अवस्था हुई उनकी, जैसे आधे पागल हो गये हों। एक रात उनके पड़ोसी की आँख खुली तो उसने देखा कि वे सज्जन आधी रात के समय अपने घर से बाहर सड़क पर घूम रहे हैं। पड़ोसी को चिन्ता हुई। उनके पास पहुँचकर उनसे पूछा, "भाई जी! आप इस समय यहाँ क्यों घूम रहे हैं?" अफसर महोदय ने उत्तर नहीं दिया; आँखें फाड़कर पड़ोसी की ओर इस प्रकार देखने लगे जैसे उन्हें पहचानने का प्रयत्न कर रहे हों। पड़ोसी ने पूछा, "तुम्हारे घर कोई बीमार तो नहीं?"

अफसर महोदय फिर भी देखते रहे, जैसे कुछ याद करने का यत्न कर रहे हों। पड़ोसी ने उन्हें कन्धे से पकड़कर हिलाया, अपना नाम बताते हुए कहा, "मैं आपका पड़ोसी हूँ, मुझे पहचानते हैं?" अफसर महोदय ने सिर हिलाकर उत्तर दिया, "हाँ!" पड़ोसी ने फिर पूछा, "आपको क्या हुआ है?"

अफसर महोदय बहुत धीमी आवाज़ में बोले, "दिल.... दिल घबराता है।"

पड़ोसी ने छानबीन की, पता लगा–घर में एक नौकर के अतिरिक्त कोई नहीं। अफसर महोदय अकेले हैं। डॉक्टर को बुलाया गया। उसने कुछ दवाई दी कि उस समय कुछ नींद आ जाये; प्रातःकाल पूर्ण निरीक्षण करेंगे। अफसर महोदय सो गए और पड़ोसी भी। रात्रि के समय नौकर जी महाराज घर की सभी मूल्यावान् वस्तुएँ और काफी नकदी लेकर चम्पत हो गये। दूसरे दिन डॉक्टरी निरीक्षण से पता लगा कि वह नौकर अपने स्वामी को प्रतिदिन थोड़ा–थोड़ा धतूरा खिलाता रहा है। धतूरे का विष अफसर के शरीर में जमा होता रहा। अन्त में उसने हृदय और मस्तिष्क पर प्रभाव करना शुरू कर दिया। कुछ धतूरा रसोईघर में रखा हुआ मिल भी गया, परन्तु नौकर तो कहीं मिला नहीं। हाँ, अफसर महोदय की अब भी चिकित्सा चल रही है। अब भी पागलों की–सी बातें करते हैं। एक मूल्यवान् मस्तिष्क को इस अभागे नौकर ने अपने थोड़े–से लाभ के लिए समाप्त कर दिया। इस प्रकार यह संसार बिगड़ता जाता है।

परन्तु संसार बिगड़े या सुधरे, मेरे भाई! मन का तप यह है कि हर हाल में प्रसन्न रहो। हर समय चिन्ताओं में मत डूबे रहो, हर समय शोकसागर में न डूबे रहो। चिन्ताओं के तूफान उठें या शोक के झक्कड़ आयें, संकटों की आँधियाँ चीखें या दुःखों के बादल गर्ज उठें, हर हाल में इस विश्वास के साथ प्रसन्न रहो कि प्रभु की इस माया में कल्याण ही होगा सदा, अकल्याण नहीं होगा। यह है मानसिक तप के सम्बन्ध में पहली बात।

और फिर **'सौम्यत्वम्'** यह दूसरी बात है। हर समय शान्त, मधुरताभरे, मस्तीभरे, गम्भीरता भरे हुए रहो। चंचल न बनो, बेचैन मत होओ, अपितु सागर की भाँति शान्त और गम्भीर बनो। सागर की ऊपरी सतह की भाँति बेचैन नहीं, दुःखी नहीं, अपितु इस प्रकार शीतल, प्रसन्न और शान्त जैसे पूर्णिमा का चाँद हो।

परन्तु आजकल किसीको ऐसी बात कहो तो वह उत्तर देता है, "स्वामी जी! आप प्रसन्न रहने की बात कहते हो, परन्तु कौन है जो प्रसन्न रहना नहीं चाहता? प्रत्येक व्यक्ति चाहता है। फिर भी ऐसी बातें हो जाती हैं जिनकी उपस्थिति में प्रसन्न रहना संभव नहीं होता।"

अंग्रेज़ी का एक शब्द लोगों ने सीख लिया है 'Circumstance'। जब भी पूछो तभी कहते हैं, "क्या करें जी, *सरकमस्टांस* ही ऐसे हो गये हैं।" मैं तो बहुत अंग्रेज़ी जानता नहीं। शायद इसका अर्थ है कि स्थिति ऐसी हो गई है, वातावरण ऐसा हो गया है कि उदास रहना पड़ता है।

तो रहो उदास। डूबे रहो शोक–सागर में और चिन्ता में। परन्तु स्मरण रखो, एक दिन मरना भी पड़ेगा और फिर यह समय लौटकर नहीं आएगा।

सुनो! जिस संसार की चिन्ता तुम्हें खाए जाती है वह आज ही नहीं बिगड़ा। इसमें दुःख है, कष्ट है, परन्तु वे सब–के–सब पहली बार नहीं आये। वर्तमान सृष्टि के 6 मन्वन्तर बीत चुके हैं। प्रत्येक मन्वन्तर में 71 चतुर्युगी होती हैं। आजकल सातवें मन्वन्तर की 28वीं चतुर्युगी का अन्तिम युग कलियुग चल रहा है। इस कलियुग में अभी केवल 5000 वर्ष व्यतीत हुए हैं। चार लाख सताईस सहस्र वर्ष अभी शेष हैं। फिर सात मन्वन्तर तो अभी पूरे शेष हैं। इसके पश्चात् विनाश आएगा। तुम अभी से यह समझकर चिन्ता में डूब जाते हो कि बस, संसार समाप्त होने वाला है और केवल तुम्हारी चिन्ता ही उसे बचा सकती है! चिन्ता ही करनी है तो अपने कर्म की करो। और उसके सम्बन्ध में भी चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। विकर्म को सुकर्म से (बुरे कर्म को उत्तम कर्म से) बदल देने की आवश्यकता है।

कर्म, विकर्म, अकर्म और सुकर्म यह चार प्रकार का कर्म है। कर्म का अर्थ है इस प्रकार का कर्म। हम सोते–जागते, साँस लेते, आँख झपकते और छींकते हैं। इसी प्रकार के दूसरे काम करते हैं। ये सब भी कर्म है परन्तु व्यर्थ। इनका केवल शारीरिक फल होता है। इसके बाद विकर्म–वह कर्म, जो जान–बूझकर बुराई के विचार से दूसरों को हानि पहुँचाने के लिए किया जाये। उसका फल बुरा होता है। तब यह अकर्म–ऐसा, जो हम अपने लिए करते हैं। खाते हैं, पीते हैं, नहाते हैं, सर्दी लगे तो कपड़ा पहनते हैं, गर्मी लगे तो हवा करते हैं; ये सब अकर्म हैं। इसका फल होता है अवश्य, परन्तु बहुत देर के लिए नहीं; शारीरिक कर्म, शारीरिक फल और फिर बस। वास्तविक फल होता है सुकर्म का–उस कर्म का जो दूसरों की भलाई के लिए जान–बूझकर किया जाये। इसका फल सदा उत्तम होता है। इन सब प्रकार के कर्मों में चिन्ता को यदि 'मूर्ख–कर्म' कहा जाये तो ठीक होगा क्योंकि इससे दूसरों की नहीं, अपनी बुराई होती है। भलाई किसी की नहीं होती। इसलिए मेरे भाई! संसार यदि बिगड़ गया है तो चिन्ता मत करो। परिस्थितियाँ यदि बिगड़ गई हैं तो शोकसागर में न डूब जाओ। सुकर्म से, उत्तम कर्म से इन परिस्थितियों को बदलो।

आजकल अष्टग्रही योग की बहुत चर्चा है। फरवरी मास में आठ ग्रह एक ही राशि में इक्ट्ठे होने वाले हैं। उनका विचार करके कई लोग घबरा जाते हैं, दुःखी हैं, चिन्तित हैं कि पता नहीं क्या होगा?"

मैं तो ज्योतिषी हूँ नहीं, परंतु आकाश में जो आठ ग्रह इक्ट्ठे हो रहे हैं उनसे कुछ हो या न हो, पृथिवी पर जो आठ ग्रह इक्ट्ठे हो रहे हैं उनसे कुछ–न–कुछ बुरा परिणाम अवश्य होगा। ये आठ ग्रह कौन–से हैं? एक साम्यवाद है, यह सबसे बड़ा ग्रह है। दूसरा अमेरिका उससे बड़ा ग्रह है, तीसरा ब्रिटेन, यह भी एक ग्रह है। चौथा पाकिस्तान, पाँचवाँ चीन और छठा–छठा भी बता दूँ? अच्छा सुनो, छठा ग्रह है पंजाब जो कभी शान्ति और चैन से नहीं बैठता।

(आर्यसमाज का हॉल पुनः हँसी से गूँज उठा। पूज्य स्वामी जी ने हँसते हुए कहा–)

अभी ये छः ही रहने दो। शेष दो का नाम नहीं लेता।

(एक सुनने वाले भाई ने ऊँची आवाज में पंजाब के दो लीडरों का नाम लिया। स्वामी जी हँसते हुए बोले–)

वे भी ग्रह ही हैं परन्तु मैं उनका नाम नहीं लेता क्योंकि दिसम्बर में छः ग्रह इक्ट्ठे होंगे। आठ ग्रह तो फरवरी 1962 में इक्ट्ठे होंगे। आठ ग्रह आकाश में, आठ पृथिवी पर, फिर संसार को चैन कैसे मिलेगा? संसार में शान्ति कैसे रह सकती है? हर ओर हथियारों की दौड़ जारी है। बड़ी–बड़ी शक्तियाँ शान्ति के नाम पर अधिक–से–अधिक संहारक हथियार बनाने पर अपनी शक्ति नष्ट कर रही हैं। क्या यह सब–कुछ शान्ति के लिए हो रहा है।

परन्तु सुनो! आकाश के ये ग्रह कुछ करेंगे नहीं। बेजान मिट्टी, पत्थर, धातु, हवा, पानी और अग्नि किसी का कुछ बिगाड़ते नहीं, सँवारते नहीं, प्रभु के सृष्टिक्रम में बँधे हुए चलते हैं। कभी–कभी एक ओर भी हो जाते हैं, तब हम कहते हैं कि वे इक्ट्ठे हो गए। वैसे वे इक्ट्ठे भी नहीं होते। परन्तु वे एक ओर रहें अथवा भिन्न–भिन्न ओर, वे किसी का बुरा–भला न तो कर सकते हैं न करते हैं। मनुष्य को सुख–दुःख मिलता है उसके सुकर्म और विकर्म से। और ये जो ग्रह पृथिवी पर इक्ट्ठे हो रहे हैं ये विकर्म–ही–विकर्म करते जाना चाहते हैं। तब शान्ति होगी कैसे? परन्तु देखो मेरे भाई! देखो मेरी माँ! शान्ति रहे या अशान्ति, संसार तो बिगड़ता ही रहता है। इसमें गर्मी, सर्दी, वर्षा, पतझड़, ऊँच–नीच, सुख–दुःख, अच्छा–बुरा चलता ही रहता है। परन्तु संसार बिगड़ जाए, बच्चे बिगड़ जायें, स्वास्थ्य बिगड़ जाए अथवा कुछ भी हो जाए, तुम अपने

शेष पृष्ठ 5 पर ☞

'भोज प्रबंध' का एक प्रसंग...

अब तक तो धरती यहीं रही, तू साथ इसे ले जायेगा

● प्रो. ओम कुमार आर्य

कितनी ही किम्वदन्तियाँ, आख्यान, लोककथाएं आदि लोभ को पाप का मूल और उससे भी आगे पाप का बाप मानती हैं। आगे चलने से पूर्व हमें यह भी समझ लेना होगा कि 'पाप' क्या है? पाप की सरल–सी परिभाषा है कि–

'य पातयति स पापः' अर्थात् जो हमें गिराता है, हमारे पतन का कारण है, हमें पतनोन्मुख करता है, ऐसा कोई भी कृत्य पाप की कोटि में आता है। अब बात और भी सरल हो गई, अर्थात् जितने भी अधम कोटि के, पैशाचिक, पाशविक, राक्षसी और आसुरी कुकृत्य मानव करता है उन सबके मूल में कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में 'लोभ' नामक मनोविकार छुपा होता है। विशेष करके हमारे यहाँ, और सामान्यतः विश्व में अन्यत्र भी, जो भ्रष्टाचार है, घपले–घोटाले हैं, शर्मनाक काण्ड हैं, मानवता के उजले मुख पर बदनुमा काले दाग और धब्बे हैं उनकी आसुरी जननी 'लोभवृत्ति' है। उनका पिशाच–पिता 'लोभ विकार' है। लोभ के वशीभूत होकर ही हम ऐसे कुत्सित कुकृत्य करते हैं जो हमारे लिये पतन का कारण बनते हैं। लोभ के कारण ही हम मनुजता को त्यागकर दनुजता के कुपथ पर चल पड़ते हैं और अन्ततोगत्वा पतन ही नहीं घोर विनाश के कगार पर जा पहुंचते हैं।

यहाँ यह लोककथा अप्रासंगिक नहीं है जो कहती है कि कोई जिज्ञासु किसी साधु के पास यह पूछने गया कि भगवन् मुझे बताइए कि 'पाप' का 'बाप' क्या है? साधु ने उस जिज्ञासु को नगर की एक गणिका के यहाँ जाने को कहा। जिज्ञासु पहले तो तैयार नहीं हुआ, किन्तु जब साधु ने बताया कि वह गणिका अवश्य है पर है बड़ी विदुषी, वह जाते ही तुम्हारी शंका का सही समाधान कर देगी, तो जिज्ञासु वहाँ चला गया। जब नगरनायिका ने देखा कि कोई अभ्यागत उसके द्वार पर खड़ा है तो उसने अपने अतिथि के आतिथ्य हेतु अर्घ्य, आचमनीय आदि प्रस्तुत किया। यह सब उसने चांदी की लघु थाली में सोने, चांदी के पात्रों में प्रदान किया था। किंतु अतिथि (जिज्ञासु) उसका आतिथ्य स्वीकार करने से सकुचा रहा था क्योंकि वह एक गणिका थी, उसका आतिथ्य ग्रहण कर लेने से जिज्ञासु को लोकापवाद की आशंका थी। गणिका सब मामला क्षणभर में समझ गई और आदरपूर्वक बोली, "महोदय ये जो सोने, चांदी के पात्र हैं ये सब मैं अपने अतिथि को ही दक्षिणा में दे दिया करती हूं, कृपया आप निःसंकोच अर्घ्यादि स्वीकार करें और ये पात्र भी।" अतिथि ने उसका यह आतिथ्य ग्रहण कर लिया और कहा "देवि, मैं तो यह जानने आया हूँ कि पाप का 'बाप' क्या है?" गणिका ने कहा, "महाराज इस प्रश्न का उत्तर भी मैं दूंगी किन्तु अब तो भोजन का समय है, कृपया आप भोजन ग्रहण करें।" उसकी सेविका तुरंत सोने, चांदी के बहुमूल्य पात्रों में भोजन ले आई। नवागन्तुक फिर झिझक रहा था कि गणिका के यहाँ भोजन कैसे करूं? गणिका ने पुनः निवेदन किया कि "महाराज आये अतिथि का भोजनादि से सत्कार करना तो हमारी प्राचीन परंपरा है, भोजन ग्रहण करके मुझे कृतार्थ करें, और हाँ यह भी ध्यान रहे कि भोजन हेतु लाये गये ये सभी पात्र भी मैं दक्षिणा में अपने सम्मान्य अतिथि को ही दे देती हूँ। जिज्ञासु ने सुना, कुछ विचार किया और भोजन भी ग्रहण कर लिया। हस्त प्रक्षालन के पश्चात् फिर कहा, "भद्रे, मेरे प्रश्न का उत्तर अब तो दीजिए कि 'पाप' का 'बाप' क्या है? नगरवधू ने मुस्कुराकर कहा, "महोदय उत्तर मैंने दे तो दिया, एक बार नहीं दो बार दे दिया।" अभ्यागत ने विस्मयपूर्वक कहा, "आपने उत्तर कब दिया, आप तो अभी तक अतिथि–सत्कार में लगी हुई थीं।" उस महिला ने कहा "तो अब सुनिये–

आप अर्घ्य, आचमनीय (जलादि) ग्रहण करने में संकोच कर रहे थे। जब आपको पता लगा कि ग्रहण कर लेने के बाद ये सभी बहुमूल्य पात्र भी आपके हो जाएंगे तो आपने स्वीकार कर लिया।

आप भोजन भी ग्रहण करने अनिच्छुक थे, लेकिन पात्र आपको दक्षिणा में प्राप्त होंगे इस सूचना के तुरंत पश्चात् आपने भोजन भी ग्रहण कर लिया। क्यों? कहाँ गई आपकी झिझक, क्यों काफूर हुआ आपका संकोच, लोकापवाद का भय भी क्यों एकदम गायब हो गया? क्यों आपने वह सब किया जो आपकी दृष्टि में गलत था, बुरा था, पाप था? इसलिए किया कि आपके मन में लोभ का भाव उत्पन्न हो गया था कि क्या बिगड़ता है जल पीने से, क्या बुराई है भोजन ग्रहण करने में, जबकि ऐसा कर लेने मात्र से इतने सारे सोने–चांदी के पात्र मुझे (अतिथि को) दक्षिणा में प्राप्त हो जाएंगे। इस लोभ ने आपसे यह सब करवाया। इसलिए श्रीमन् 'लोभ ही 'पाप का बाप है।' **पापस्य मूलं लोभः इति।** इस दृष्टांत का दृार्ष्टान्त यही है कि मनुष्य मनसा, वाचा, कर्मणा जितने भी पाप–कर्म करता है उनके सबके मूल में लोभ का विकार विद्यमान होता है।

पाप हमारे लिये दुःख का कारण बनता है और दुःख विशेष अर्थात् घोर दुःख को ही नरक कहा जाता है। इसलिए गीताकार ने लोभ की गणना नरक के तीन द्वारों में की है–

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्।। गीता 16/2/1

इस श्लोक में योगेश्वर श्रीकृष्ण ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि– काम, क्रोध और लोभ नर्क के द्वार हैं। नरक अर्थात् घोर दुःख (दुःख विशेष) जो कुपरिणाम है पाप का, पाप, कि जिसका जनक है, मूल है लोभ। इसलिये हमें 'लोभ' के विषांकुर अपने मनोक्षेत्र में कदापि–कदापि पैदा नहीं होने देने चाहिएँ। लोभ से हम सदैव कोसों दूर रहें। **'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्'** (यजु 40/1) कहकर वेद भी इसकी पुष्टि कर रहा है। छह पशुओं की अपनी–अपनी दुष्प्रवृत्तियों से भी मनुष्य को दूर रहने का उपदेश करते हुए अथर्ववेद भी गीध की महाभयंकर और घातक दुष्प्रवृतिः लोभ (लालच) से बचने का परामर्श देता है–

(**....जहि....'गृधयातुम्'** अथर्व 8/4/22 ऋग्वेद के अग्र निर्दिष्ट ये 8 मंत्र भी मंत्रान्त में **'अप नः शोशुचदधम्'** ऋग्वेद 1/97/1–8 कहकर पापभावना को समूल नष्ट कर देने का उपदेश देते हैं परोक्षतः यही संदेश देता है कि लोभ से बचो, पाप से अपने आप बचे रहोगे। लोभ के लिये अपने अंतःकरण में प्रवेश हेतु कोई छिद्र कहीं न छोड़ो, न लोभ आएगा, न पाप–भावना सर उठाएगी, जब बांस ही नहीं रहेगी तो बांसुरी कहाँ से बजेगी, कैसे बजेगी? लोभ खत्म, मनवाँ निष्पाप जीवन पाक–साफ, मोक्ष का मार्ग प्रशस्त। इसी तथ्य की ओर संकेत कर रहा है 'भोज प्रबंध' में उल्लिखित वह प्रसंग जिसको आधार बनाकर मैंने शीर्षक दिया है.... 'मुञ्ज! त्वया यास्यति' अर्थात् *अब तक तो धरती यहीं रही तू साथ इसे ले जाएगा।* आइए, संक्षेप में देखें कि वह घटना क्या है और कैसे वह दर्शाती है कि मनुष्य क्यों पापकर्म करने को उद्यत होता है, कैसे उसकी आंखें खुलती हैं, वह पछताता है। क्यों? कैसे यह सब हो जाता है?

'भोज प्रबंध' का यह संदर्भित आख्यान बताता है कि जब महाराज भोज के पिता महाराज सिंधुल की मृत्यु हुई थी तब भोज बालक थे। महाराज सिंधुल ने अपने भाई मुञ्ज को अपने पास बुलाकर बालक भोज उनको सौंपा था और कहा था कि भोज को गुरुकुल भेजकर अच्छी शिक्षा दिलवाना, राजनीति, शस्त्रविद्या, धर्म–शिक्षा आदि में निष्णात भोज जब व्यस्क हो जाए तब राज्य उसे सौंप देना। तब तक एक न्यास के रूप में राज्य तुम (मुञ्ज) संभालना। मुञ्ज ने महाराज सिंधुल को पूरी तरह आश्वस्त किया कि वह भोज को पुत्रवत् समझेगा और यथासमय राजगद्दी उसे (भोज को) सौंप देगा। महाराज सिंधुल संसार से चले गये, मुञ्ज ने राज्य का दायित्व संभाला, बालक भोज को शिक्षार्थ गुरुकुल भेज दिया गया। कुछ समय तक तो सब ठीक–ठीक चलता रहा, किंतु बाद में सत्ता के असीम सुख, सत्ता से जुड़ी अन्य सुविधाओं, चाटुकारों की जी–हुजूरी, अभिवादन में झुकते अगणित सरों, आज्ञा पालन में तत्पर नौकर–चाकरों की लम्बी पंक्ति ने मुञ्ज का मानो दिमाग ही बदल दिया, कवि की यह उक्ति –

ऐसो को जन्मो जग मांहि
प्रभुता पाय जाको मद नांहि।

पूरी तरह मुञ्ज पर चरितार्थ होने लगी। उसके मन में सत्ता–लिप्सा, सत्ता भोगने का लोभ–सत्ता में बने रहने का लालच प्रबल से प्रबलतर और प्रबलतर से प्रबलतम होता चला गया। परिणामस्वरूप उसने निर्णय कर लिया कि अपने पथ के कांटे, रास्ते की रुकावट, भोज को रास्ते से हटाना ही होगा, उपाय–भोज का वध। जल्लाद बुला लिये गए, सारी योजना उनको समझा दी गई और उनको तुरंत भोज के पास गुरुकुल भेज दिया गया।

यह सब तो तय हो गया, किन्तु जल्लादों में सिंधुल के नमक के प्रति वफादारी अभी बाकी थी। भोज को उन्होंने कभी गोद भी खिलाया था, उसकी तुतलाती बोली, बचपन की डगमग डांवाडोल चाल, उसकी बाल सुलभ क्रीड़ाओं की बलैयां भी कभी ली थीं। वे भोज को कैसे मार सकते? किंतु उधर कठोर राजाज्ञा थी, राजा का भय था– भोज का वध तो उनकी मजबूरी थी। उन्होंने रास्ता निकाल लिया। भोज से कहा– युवराज हम तुम्हें मारेंगे नहीं, जंगली जानवरों की आंख, कान, नाक आदि दिखाकर मुञ्ज को आश्वस्त कर देंगे कि हमने भोज को वास्तव में ही मार दिया है। तुम अपना वध हो गया मानकर मरते वक्त का कोई संदेश अपने चाचा के नाम हमें लिखकर दे दो। क्योंकि हम जानते हैं कि मुञ्ज हमसे अवश्य पूछेंगे कि 'मरते वक्त भोज ने मेरे लिये (मुञ्ज) अवश्य ही कुछ कहा होगा'। तब

शेष पृष्ठ 8 पर ☞

दुःखों की निवृत्ति के लिए योग–साधना की आवश्यकता

● आचार्य भगवानदेव वेदालंकार

दुःखों की निवृत्ति के लिए योग–साधना की आवश्यकता

इस संसार में दुःखों की भरमार है। कोई किसी दुःख से परेशान है और कोई किसी दूसरे दुःख से परेशान। दुःख ऐसी बला है कि लगभग अधिकतर व्यक्तियों के पास आता है। शायद इसी स्थिति का अनुभव करके गुरु नानकदेव जी ने कहा है कि– **"नानक दुखिया सब संसार"** साँख्य दर्शन के रचनाकार महर्षि कपिल मुनि ने तो अनुभव करके लिख ही दिया कि इस संसार में तो मुख्य रूप से तीन प्रकार के दुःख दृष्टिगोचर होते हैं– **"अथ त्रिविध दुःखात्यन्तनिवृतिः अत्यन्त पुरुषार्थः"**।– सांख्य दर्शन– अर्थात् ये जो तीन प्रकार के दुःख हैं इनकी निवृति करना ही मनुष्य के जीवन का मुख्य उद्देश्य है। **"अत्यन्त पुरुषार्थः"** दुखों को दूर करना ही सबसे बड़ा (पुरुष+अर्थ) लक्ष्य होना चाहिए। मनुष्य का ऐसा प्रयत्न होना चाहिए जिससे दुःख दूर हो जायें और अमृत, आनन्द की प्राप्ति हो जाये। ऋषि–मुनियों, त्यागी–तपस्वियों, शास्त्रकारों की दृष्टि में वे तीन प्रकार के दुःख निम्न प्रकार से हैं–

आधिभौतिक दुःख–

'भौतिक दुःख' हमें सांसारिक भौतिक प्राणियों से जिनमें प्रमुख रूप से मनुष्यों, अपनी संतानों की बगावत करने से, चोर, डाकू, लुटेरों द्वारा धन चुराने, हिंसा पर उतारु होने से, हिंसक जीव–जन्तुओं के काटने, विष–वमन करने से, आपस में लड़ाई–झगड़ा, गाली–गलौच, मार–पिटाई आदि करने से दुःख प्राप्त हो सकते हैं।

आध्यात्मिक दुःख– संसार में कुछ दुःख ऐसे भी होते हैं जो हमारे भीतर से उपजते हैं, जैसे– 'क्रोध' आन्तरिक कमजोरी है। अधिक क्रोध करना, 'मोह' के वशीभूत होना, लोभ–लालच में पड़कर अत्याचार करना, रुपये–पैसों की हेरा–फेरी करना, ईर्ष्या–द्वेष करना इत्यादि ये कुछ आन्तरिक मानवोचित कमजोरियाँ हैं। इन कमजोरियों के रहते मनुष्य दुःखों का अनुभव करता है।

"लोभः पापस्य कारणम्" अर्थात् अधिक लोभ–लालच पाप का कारण माना गया है जो दुःख का हेतु है।

आधिदैविक दुःख– संसार में कुछ दुःख ऐसे भी होते हैं जो हमें दैवी आपदा, ईश्वरी प्रकोप के कारण अथवा प्रकृति के कुपित होने से प्राप्त होते हैं जैसे– भूकम्पों के आने, अति वर्षा होने, अनावृष्टि, सूखा पड़ने, अधिक बर्फबारी, ज्वालामुखी के फटने इत्यादि रूप में प्रकृति से प्रकुपित होने से दुःख प्राप्त हो सकते हैं।

इन तीनों प्रकार के तापों से संतप्त होकर मनुष्य चिल्लाने लगता है और प्रभु से प्रार्थना करता है कि हे भगवन्! हमें इन तीनों तापों से, दुःखों से तथा कष्टों से छुटकारा दिलाइये।

योगदर्शन के रचनाकार महर्षि पतञ्जलि जी ने लिखा है– **'हेयं दुःखमनागतम्"** –योगदर्शन 2/सूत्र 16 अर्थात्– **(अनागतं दुःखम हेयं)** भविष्य में आने वाले दुःखों से बचने का उपाय करना चाहिये।

दुःख–प्राप्ति के और कारण क्या हैं?

शास्त्रकारों विद्वान आचार्यों ने इस विषय पर गहन अध्ययन किया है। यद्यपि दुःख–प्राप्ति के अनेक कारण हो सकते हैं फिर भी संक्षेप से सूत्र–रूप में इस गहन विषय को आपके सामने और अधिक चिन्तन हेतु रखा है।

महर्षि कपिल मुनि का कथन है–

बन्धौ विपर्यात्–साँख्य दर्शन 3/24

अर्थात् दुःखों की प्राप्ति का कारण विपरीत ज्ञान भी है। इसी प्रकार गौतम ऋषि का कथन है–

बन्धर्नालक्षणं दुःखम् – न्यायदर्शन–अर्थात् परतन्त्रता, पराधीनता भी दुःख है। महर्षि पतञ्जलि का मानना है कि–

'तस्य हेतुरविद्या'– योग दर्शन 2/24

अर्थात् क्लेश अथवा दुःख जो त्यागने योग्य हैं जिसको दूर करना सबसे बड़ा पुरुषार्थ कहलाता है। उन दुःखों का एक कारण अविद्या है। अविद्या के कारण ही अनेक प्रकार के दुःख उत्पन्न होते हैं। योगदर्शन में प्रमुख रूप से पाँच क्लेश बतलाये गये हैं–

अविद्यास्मिता राग द्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः।। –योगदर्शन 2/13 अर्थात्– (1) **अविद्या**– अज्ञानता, कुरीतियाँ, अन्धविश्वास जैसी नासमझी रखना दुःख का कारण है। (2) **अस्मिता**– अर्थात् अहंभाव रखना, घमण्ड करना, अभिमानी बनना दुःख का कारण है। व्यक्ति को अभिमानी नहीं, बल्कि स्वाभिमानी बनना चाहिए। (3) **राग**– संसार में अधिक मोह भी दुःख का कारण होगा। राग के स्थान पर त्यागशील होना चाहिए। (4) **द्वेष**– व्यक्ति को दूसरे व्यक्तियों से द्वेष की भावना, ईर्ष्या के विचार नहीं रखने चाहिएँ बल्कि ईर्ष्या, द्वेष के स्थान पर दूसरों से प्रेम, सहानुभूति के भाव रखने चाहिए। (5) **अभिनिवेशः**– मृत्यु से भयभीत होने के विचार मन में लाना, मृत्यु से डरना। इससे भी दुःख होता है। व्यक्ति को निर्भय बनना चाहिये। हरेक प्राणी की 'मृत्यु' निश्चित है। इस प्रकार इस संसार में ऋषियों ने संकेत रूप से दुःख के, कष्टों के, नाना क्लेशों के कुछ लक्षण हमारे सामने प्रस्तुत किये हैं।

योग–साधना की आवश्यकता–

इस मरणशील संसार के दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति के लिए "योग–साधना" की महती आवश्यकता है। यद्यपि आज का मानव योग–साधना जैसी उत्तम क्रियाओं से दूर होता दिखलाई दे रहा है। आज के मानव के लिए 'अर्थ' धन, ऐश्वर्य, भोग–विलास के साधन, मकान, सम्पत्ति जैसी सांसारिक वस्तुयें इक्ट्ठा करना ही उद्देश्य अधिक बनता जा रहा है। संस्थाओं के बड़े–बड़े अधिकारी, देश के कुछ राजनेता, अभिनेता, नौकरशाह, कुछ जरूरत से ज्यादा ही अत्यन्त सांसारिक बनते चले जा रहे हैं।

उनका ध्यान इस बात की ओर न्यूनातिन्यून होता जा रहा है कि आज के इस भौतिकवादी युग में भी दुःखों की निवृत्ति के लिए और परमानन्द की प्राप्ति के लिए योग–साधना के प्रति अधिक पुरुषार्थ करने की आवश्यकता है। **सबसे उत्तम पुरुषार्थ है योग–मार्ग पर चलना**

हमारे देश के ऋषि–मुनियों ने, विद्वान् आचार्यों ने कई प्रकार के पुरुषार्थों में से दुःखों की निवृत्ति के लिए, मोक्ष रूपी आनन्द की प्राप्ति के लिए "योग–साधना" के द्वारा ईश्वर–प्राप्ति के लिए किये गये पुरुषार्थ को ही उत्तम माना है। कई प्रकार के पुरुषार्थों में जैसे विद्या–प्राप्ति, बलवान् बनने, धन कमाने, व्यापार–कारोबार आदि सभी कामों को सिद्ध करने के लिए व्यक्ति पुरुषार्थ अवश्य करता है लेकिन जिस पुरुषार्थ के द्वारा हमारी अशान्ति दूर हो, सुखों में वृद्धि हो, क्लेश शमन हों, दुःखों से छुटकारा मिले, "योग–साधन रूपी पुरुषार्थ" को सबसे उत्तम माना गया है। अतः अन्य पुरुषार्थों के साथ–साथ "योग–साधना के मार्ग पर चलने का" ईमानदारी, से निष्ठा से, हृदय से प्रयास करें। योग के मार्ग पर चलने से संसार में आने वाले दुःखों से, अशान्ति से, तनाव से मुक्ति मिलेगी। योग–मार्ग पर चलने से ईश्वर के परमानन्द की अनुभूति होगी। जीवन में उत्साह, जीने की राह मिलेगी।

योग का स्वरूप क्या है? महर्षि याज्ञवल्क्य के अनुसार जिस क्रिया के द्वारा ईश्वर और जीव का मेल हो,उसे योग कहते हैं। **"संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मा परमात्मनोः"**– याज्ञवल्क्य स्मृति 2–44

योग के सम्बन्ध में प्रमाण रूप में महान योगी महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के नौवें समुल्लास के अन्त में महर्षि पतञ्जलि के योगदर्शन का सूत्र प्रस्तुत किया है–

"योगश्चित्तवृत्ति निरोधः" योगदर्शन प्रथम पाद, सूत्र–2 अर्थात् मनुष्य रजोगुण, तमोगुण युक्त कर्मों से मन को रोक शुद्ध सत्त्वगुण युक्त कर्मों से भी मन को रोक, शुद्ध सत्त्वगुण हो, पश्चात् उसका निरोध कर, एकाग्र अर्थात् एक परमात्मा और धर्मयुक्त कर्म, इनके अग्रभाग में चित्त को ठहरा रखना (निरूद्ध) अर्थात् सब ओर से मन की वृत्ति को रोकना 'योग' है।

"तदा द्रष्टुः स्वरूपे अवस्थानम्" महर्षि पतञ्जलि आगे कहते हैं कि जब चित्त एकाग्र हो जाता है तब इसके द्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा की स्थिति होती है। किसी कवि का यह कथन सुन्दर है।

"सब जगह मौजूद है, पर नजर आता नहीं।
योग साधना के बिना उसको कोई पाता नहीं।।"

इस प्रकार संसार में सबसे उत्तम क्रिया का नाम योग है। योगाभ्यास सबको करना चाहिए। योग–साधना करने से निश्चय ही दुःखों से छुटकारा मिल जाता है।

A-94 विकासनगर, फेस–3
नई दिल्ली–59

☞ पृष्ठ 3 का शेष

घोर घने जंगल में

मन में मैल न आने दो। इसको बिगड़ने न दो। देखो, बिगड़ा हुआ संसार सुधर जाता है, परन्तु यह सब–कुछ तब होता है जब आपका मन सुधरा रहे, पवित्र रहे। यदि मन ही बिगड़ जाए तो बहुत कठिनाई पड़ती है मेरे भाई! मन सुधरा रहे तो प्रत्येक बिगड़ी वस्तु को सुधार देता है। मन बिगड़ जाए तो सब–कुछ बिगड़ जाता है–

मन के जीते जीत है, मन के हारे हार।

इस मन को मत हारने दो–

मनः एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।

'मन ही मनुष्य के बंधन और मोक्ष का कारण है।' इसे चिन्ता और दुःख से ग्रस्त न होने दो। संसार में आँधियाँ आयें या तूफ़ान, बवण्डर गर्जे या भूचाल, इस मन को आप डावाँडोल मत होने दो। हर समय संसारवालों की चिन्ता नहीं करते रहना चाहिए।

क्रमशः

हिन्दू समाज के गौरव गिरि

आर्य समाज का पुनर्मूल्यांकन!

● डॉ. धर्मचन्द्र विद्यालंकार 'समन्वित'

आज भले ही हमें धर्म की भूमिका असंगत प्रतीत होती हो, परन्तु अतीत में वह बहुत प्रासंगिक एवं प्रेरक रही है। भगवद्–गीता ने हमारे राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में कर्म–दर्शन के माध्यम से सतत संघर्ष की अभिप्रेरणा प्रदान की थी। क्योंकि मूलवैदिक दर्शन वैराग्य और दुःख मूलक नहीं था। करूणा किवां दया और निवृति अथवा वैराग्य और उससे उत्पन्न निर्वेद की मानसिकता श्रमण–संस्कृति की ही देन रही हैं। एक प्रकार से श्रीकृष्ण बुद्धरूपी अर्जुन को ही निवृत्ति मूलक मनोदशा से उपरत करके उसे कर्म किवां संघर्ष का पावन संदेश दे रहे हैं। यहाँ पर हमें यह भी नहीं भूलना होगा कि श्रीमद्भगवद्गीता ईसा की पाँचवी शताब्दी (गुप्तकाल) में रचित महाभारत का परिशिष्टाँग ही तो है। अतएव श्रमण संस्कृति की विरक्ति की प्रतिक्रिया उसमें संभव है।

बाल गंगाधर तिलक ने 'गीता–योगरहस्य' नामक बृहद्भाष्य लिखकर गीता के कर्म–दर्शन और अनासक्त भाव को विपुल विस्तार विस्तृत व्याख्या के माध्यम से दिया था। कितने ही राष्ट्र–भक्त क्रांतिकारियों ने उस महाग्रंथ से राष्ट्रप्रेम की बलिवेदी पर अपने प्राण–प्रसून अर्पित करने की पुनीत प्रेरणा प्राप्त की थी। महात्मा गांधी और विनोबा भावे तो गीता को एक ग्रंथ मात्र ही नहीं अपितु सद्शिक्षा रूपी दुग्ध–पान कराने वाली माता ही मानते थे। अतएव राष्ट्रीय स्वाधीनता सग्राम में धार्मिक साहित्य की एक प्रेरक एवं प्रगतिशील भूमिका रही है। धर्ममात्र को ही प्रतिगामी अथवा प्रतिक्रियावादी मानकर उसका सिरे से ही नकार हमें सर्वथा स्वीकार्य नहीं है। फिर महापुरुषों की त्याग और तपस्या का एकाएक अस्वीकार भी काम्य कहाँ है?

जहाँ तक आर्य–समाज की भूमिका का संदर्भ है, वह तो दोहरी है। एक ओर उसने वैदिक राष्ट्र–भाव का पुर्नजागरण भारतीय जन–मन में किया था; तो दूसरी ओर उसने समाज–सुधार की पावन प्रेरणा भी अपने अनुनायियों को दी थी। वैसे तो महात्मा–गाँधी और पं. मदनमोहन मालवीय एवं गोस्वामी गणेश जी महाराज जैसे स्वनामधन्य लोगों ने अच्छूतोद्धार और दलितोद्धार के पुरोगामी कार्य में पग प्रसार किया था। लेकिन आर्य समाज ने तो अछूतों और अन्त्यजों को अपने गुरुकुलों में प्रविष्ट ही करा दिया था। जिस नारी शिक्षा को शास्त्रीय सनातनी धर्मध्वजियों ने मध्यकाल से प्रतिनिषिद्ध अथवा प्रतिबंधित कर रखा था, उस दुर्ग–द्वार का उन्मुक्त आर्यवीरों ने ही किया था।

स्मार्त धर्मावलम्बी अथवा सनातनी हिन्दू धर्म किंवा आर्य–धर्म मैं किसी व्यक्ति के पुनर्प्रवेश के पक्षधर नहीं थे, अपितु उनकी तो रूढ़ मान्यता अथवा धारणा यही थी कि जो व्यक्ति एक बार वैदिक या हिन्दू धर्म से पतित हो गया वह सदैव के लिए यवन और मलेच्छ ही हो जाता है। इसके विपरीत वेदपथगामी आर्यों ने शुद्धि का सुदर्शन चक्र चलाकर अपने धर्मान्तरित बंधुओं का स्वधर्म में पुनः पवित्र प्रवेश कराया। यहीं क्यों, उनको गले लगाया और उनके लिए आर्य अनाथालयों का उद्घाटन किया। यहीं नहीं, उनके लिए हिन्दू समाज में शादी–विवाह के दरवाजे भी खोल दिये। आगरा के पास लोधे और मलखानों की शुद्धि स्वामी श्रद्धानंद जी महाराज ने स्वयं की थी; तो 1899 ई. और 1954 ई. में चौ. राधेलाल रावत (बहीन) ने भक्त फूल सिंह की पूत प्रेरणा से मूले जाटों का पुनमिर्लन किया था।

सनातनी पण्डितों ने जिन दलित और शूद्र–श्रमिक वर्गों के लिए शिक्षा का मोक्षमार्ग अवरुद्ध कर रखा था, उसका उद्घाटन भी आर्यसमाज ने ही किया था। अपने गुरुकुलों और आश्रमों में शूद्रों और निषादों को भी उन्होंने देववाणी संस्कृत की पावन शिक्षा प्राप्त करवायी। अन्त्यजों को अस्पृश्यता के पाप–पंक से उबारकर उनको पण्डित् की उपाधि प्रदान कर उन्हें भी पतित पावन बनाया गया। जबकि घोर सनातनी पोंगापण्डित इसे 'कलियुग का पातक कर्म' ही मान रहे थे। नारी और शूद्रों के लिए सनातनी पण्डितों ने शिक्षा के दिव्य–द्वार सदा–सदा के लिए बन्द कर रखे थे, लेकिन स्वामी दयानन्द और उनके अनन्य अनुयायियों ने उस दुर्ग–द्वार का कपाल खोलकर शूद्र वर्गों की ज्ञान प्राप्ति की विकट बाधा को सदैव के लिए समूल नष्ट कर दिया था।

यहाँ पर यह भी ज्ञातव्य है कि हमारी वर्तमान की मध्य किसान जातियाँ जाट–गूर्जर–आभीर–लोधा–कुर्मी आदि भी सनातनी शास्त्रीय दृष्टि में शूद्र सम्मान्य थी। वहाँ पर शूद्रों की दो कोटियाँ थी– 1. सत्शूद्र 2. असत्शूद्र। सत्शूद्र वे किसान जातियाँ थी; जिनके घरों का अन्नजल विप्रदेव ग्रहण कर उन्हें कृतार्थ कर सकते थे। असत् शूद्र संवर्ग में वर्तमान की शिल्पकार एवं कामगार जातियाँ ही आती थीं; जिनके अन्न–जल का स्पर्श भी द्विजदेव पातक कर्म समझते थे। लेकिन आर्यसमाज ने कृषक केसरियों को क्षत्रिय वर्ग जितना सम्मान दिया। परिणामस्वरूप हमारी मध्य किसान जातियों का सर्वाधिक सामाजिक समुत्थान हुआ है। उन्हें संस्कृत की शिक्षा–प्राप्ति का दुर्लभ अधिकार मिला। यज्ञोपवीत *(जनेऊ)* धारण करने का भी अलभ्य अधिकार उन्हें उपलब्ध हुआ। जो कार्य पंजाब में सिख गुरुओं ने किसान जातियों को सिंह सम्बोधन देकर किया था, वही कार्य आर्यसमाज ने हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में किया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में 'पोपजी और जाट जी' की कथा का दिव्य दृष्टान्त देकर किसान जातियों के सुषुप्त स्वाभिमान को जागृत किया। यह अकारण नहीं है कि स्वामी दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश की पूत प्रेरणा से प्रेरित होकर हिन्दी के महान् लेखक मुंशी प्रेमचन्द ने ***'गोदान'*** जैसा अपना कालजयी उपन्यास रचा था। यहाँ पर यह ज्ञातव्य है कि 1936 ई. में मुंशी प्रेमचन्द आर्य समाज लाहौर के वार्षिक उत्सव में मान्य मुख्यातिथि के रूप में पधारे थे, तभी उन्हें स्मृति–उपहार के रूप में 'सत्यार्थ प्रकाश' की एक प्रति भेंट की गई थी। जिसमें से उन्होंने 'पोप जी और जाट जी' वाली लघु दृष्टान्त–कथा का अध्ययन किया था। वहीं से गोदान उपन्यास की पूर्व पीठिका बनी थी। अतएव ऐसी महान रचना की प्रसव–भूमि सत्यार्थप्रकाश बनी। यह रहस्योद्घाटन उनके द्वारा रचित निबंध से होता है। बल्कि यहाँ एक और विषय विशेषतः दृष्टव्य है कि धर्माचार्य होते हुए भी स्वामी दयानन्द का (जाट) किसान मुंशी प्रेमचन्द के पूर्वी अहीर किसान से अधिक प्रगतिशील है। क्योंकि वह पुरोहित को दान में दत्त अपनी गाय को तेरहवीं के पश्चात् खोलकर अपने घर ले आता है, जबकि गोदान उपन्यास का नायक यही कहता है कि "जो पाँव अपनी गर्दन पर रखा है, उसको सहलाने में ही सलामती है।" यही नही, वह अपने पिता के पिता के पिण्डदान एवं मुक्ति के लिए गोदान को अनिवार्य एवं अपरिहार्य मानता है। अतएव स्वामी दयानन्द का जाट किसान पंजाब और हरियाणा एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश (कुरूमण्डल) का वही प्रगतिशील और रूढ़िभंजक किसान है जो कि आर्य समाज के पुण्य प्रभाव से हमें आज पर्यन्त प्रगत प्रतीत होता है। यही किसान वर्ग अन्नपूर्णा देवी का अगम्य आगार है। स्वर्ण शस्य उपजाता है और राष्ट्रीय अन्नागार में अपना अनन्य अवदानता है।

आर्य समाज के समाज सुधारक आन्दोलन की पूत प्रेरणा से उत्तर भारत की मध्य किसान जातियों ने सामन्ती सन्निपाती संस्कारों से संयुक्त सतीप्रथा का परित्याग किया; तो विधवा–विवाह किवां पुनर्विवाह की वैदिक परम्परा का पुनर्पालन भी किया। बाल–विवाहों पर प्रतिबन्ध लगा और ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाले युवा ब्रह्मचारियों के वैदिक विधि से विवाह रचाये जाने लगे। विधवा–विवाह करने से नारी जाति को एक प्रकार से पुनर्जीवन ही मिल गया था। जिन विधवाओं का केश–कर्तन कराकर उन्हें घर के किसी शून्य कोने–अन्तरों से अवांछित वस्तु अथवा फालतू या बेकार के सामान की भाँति पटक दिया जाता था वे भी आर्य समाज की पुनीत प्रेरणा से पुनः सरसा उठी थीं। यहाँ पर यह ज्ञातव्य है कि सनातनी स्मार्त धर्म में विधवा–विवाह अथवा पुनर्विवाह पूर्णतः प्रतिनिषिद्ध था। क्योंकि मनुस्मृति में उसकी स्वीकृति नहीं थी– **"न हि नारी पुर्नविवाहमर्हति"** जैसा अवैदिक आदेश वहाँ पर दिया गया था। इसी आधार पर किसान जातियाँ शूद्र एवं व्रात्य कही जाती थीं।

यह कहना नहीं होगा कि पूर्वी और दक्षिणी भारत में जहाँ पर विधवा–विवाहों का पावन प्रचलन नहीं हुआ, वहाँ की द्विजाति विधवा महिलाएँ भिक्षाटन करके (श्वेत वस्त्रों में) जीवन–यापन करती हैं। उत्तर–भारत की जिन भी कृषक और श्रमिक एवं दलित जातियों ने पुनर्विवाह की पावन परम्परा का पालन किया, उनकी एक भी श्वेत वसन वामा भिक्षुणी के रूप में नहीं मिलती। यह उत्तर–भारतीय जनमानस में आर्यसमाज की समाज–सुधार भावना का प्रेरक प्रसंग ही है। किसान जातियों में से कन्यावध पितृसत्ता के वर्चस्व के चलते होता था, वह भी आर्य समाज के पुण्य प्रभाव से बहुत कुछ रुक गया था लेकिन आधुनिक यन्त्रों ने और दान–दहेज की दिन–रात बढ़ती, मांग ने भी कन्या वध किवां भ्रूण–हत्या को बढ़ावा ही दिया है।

आर्य समाज की कुछ बातें ऐसी है कि जिन से सबकी सहमति होना संभव नहीं है। यथा, वेदों की रचना बजाय ऋषियों को ईश्वर द्वारा प्रदत्त मानना एक ऐसी ही मान्यता है, इसी प्रकार वैदिक धर्म की वर्ण–व्यवस्था की अवधारणा से भी कुछ लोगों को असहमति हो सकती है। सर्वांश में सहमति तो किसी भी मत या पंथ के सिद्धांतों से त्रिकाल में भी संभव नहीं है। अतएव हमें आज आर्य समाज का उसके युगीन संदर्भों में सर्वांगीण आकलन करना होगा।

मूर्तिपूजा और अवतारवाद का खण्डन करके आर्य समाज ने भारतीय समाज का महान् उपकार किया है। क्योंकि सनातनी पुरोहिती मायामहल इन्हीं दो आधारों पर अवलम्बित है। अवतारवाद ने महान् मनुष्यों

शेष पृष्ठ 7 पर

दयालु बनो

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

ईश्वर के गुणों का बखान करते समय हम प्रतिदिन ईश्वर को दयालु बताते हुए उनसे दया की याचना करते हैं। परन्तु ऐसा करते हुए हम भूल जाते हैं कि ईश्वर की सच्ची स्तुति केवल ईश्वर के गुणों को याद करना ही नहीं अपितु इन गुणों को अपने पूर्ण परुषार्थ के साथ ईश्वर से उन गुणों को अपने जीवन में धारण करने की प्रार्थना करना होता है। इसलिए यह हमारा दायित्व बन जाता है कि हम ईश्वरीय गुण दयालुता को अपने जीवन में धारण करके दूसरों पर दया दिखायें। जिस प्रकार प्रदत्त समस्त ऐश्वर्य जैसे चन्द्रमा की शीतलता, सूर्य का प्रकाश, पृथिवी के खनिज, वनस्पतियां, जल, वायु आदि विश्व के समस्त प्राणियों के लिए ईश्वरीय दयालुता के रूप में सह. जता से उपलब्ध हैं ठीक उसी प्रकार हमें भी सभी प्राणियों के लिए ईश्वरीय दयालुता का व्यवहार करना चाहिए। ईश्वरीय न्याय व्यवस्था में भी दया का साम्मिश्रण होता है ठीक उसी प्रकार का व्यवहार हमें भी करना चाहिये।

जब हमें अपने जीवन में दया की आवश्यकता होती है तो हम दोनों आंखें खोलकर दया की भीख मांगते हैं परन्तु यदि कहीं-कहीं किसी को हमारी दया वा सहानुभूति की आवश्यकता हो तो हम अपने दोनों कान बंद कर लेते हैं। हमें जीवन में दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा हम दूसरों से अपने लिए अपेक्षित करते हैं शाश्द यही धर्म की सरलतम परिभाषा है। इसलिए यदि हम ईश्वर से दया की याचना अपने लिए करते हैं तो हम भी जीवन में दूसरों पर दया करना सीखें। दया का अर्थ है मनसा वाचा कर्मणा किसी प्रकार से किसी को कष्ट ना पहुंचाना और सदा परोपकार करना। गोस्वामी तुलसीदास जी दयालुता को सबसे बड़ा धर्म बताते हुए कहते हैं

पर हित सरस धर्म नहिं भाई।
नहीं पर पीड़ा सम अधमाई।

अर्थात् दूसरों पर दया से बढ़कर कोई धर्म नहीं और परपीड़ा के समान कोई पाप नहीं है। जो केवल दया की भावना से प्रेरित होकर परोपकार के सेवा कार्य करते हैं उन्हें ईश्वरीय न्याय व्यवस्था में सुख आनन्द की प्राप्ति होती है। महर्षि दयानन्द ने भी संसार के उपकार को मुख्य उद्देश्य बतलाया है। परोपकार के कार्य हम दया की भावना से ही कर सकते हैं। देव दयानन्द तो स्वयं ही दया का अथाह सागर थे जिन्होंने अपने हत्यारे, जहर देने वाले रसोइये को दया दिखाते हुए धन देकर भाग जाने को कहा था। महर्षि दयानन्द ने अपने हत्यारे को छोड़ देने के लिए कहा था ''इसे छोड़ दो, मैं संसार को कैद कराने नहीं आया, अपितु मुक्त करवाने आया हूं।'' क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि समस्त बुराइयां निरन्तर दयालुता के व्यवहार से समाप्त हो जाती हैं। दयालुता के व्यवहार से शक्ति, प्रसन्नता और सन्तोष प्राप्त होते हैं। पाश्चात्य विद्वान् गेटे के शब्दों में दयालुता वह सोने की जंजीर है जिससे समाज आपस में बंधा है। यदि मनुष्यों में दयालुता का भाव समाप्त हो जाये तो क्रोध, लोभ, मोह आदि से उत्पन्न विद्वेष भाव के कारण समाज में विघटन की स्थिति पैदा हो जायेगी।

दया से भरा हृदय सबसे बड़ी दौलत है और दयाशील का अन्तः करण प्रत्यक्ष स्वर्ग के समान होता है। दया धर्म की जननी है और दुनिया का अस्तित्व शस्त्र बल पर नहीं बल्कि सत्य दया और आत्मबल पर है। जो मनुष्य दूसरों पर दया करता है वह स्वयं अपना हित करता है। दया करते समय बस इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि आपकी दया से पाप करने वाले निर्दयी पापी को साहस न मिले और आपकी दया सदा न्यायोचित आचरण के साथ होनी चाहिए।

502 जी एच 27
सैक्टर 20 पंचकूला

भारतीय परम्पराओं में छिपे सेहत के मन्त्र

● मोहन लाल मगो

आज मनुष्य मनमानी कर रहा। जीवन का कोई पहलू अछूता नहीं बचा।

परमसत्ता-जीव की हर सुखदायक-प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं हम, परिणामस्वरूप हम, नित्य नये रोग के रोगी होते जा रहे हैं। अगर हम स्वस्थ रहना चाहते हैं, वेद के प्राकृतिक नियम के मन्त्रों को दैनिक जीवन में उतार लेना चाहिए।

आयुर्वेद जीवन, मन तथा शरीर को स्वस्थ रखने की एक अकेली कुन्जी है। रोग का उन्मूलन करती है, नये रोग नहीं लगाती ।

खान-पीने आदि के संस्कार, स्वास्थ्य के हिसाब से बनाये गये थे। वे संस्कार आज भी उतने कारगर और प्रासंगिक हैं। आधुनिक विज्ञान भी यह बात स्वीकार करता है।

सप्ताह में एक दिन उपवास करने का अर्थ है एक दिन अनाज नहीं खाया। हर दिन अनाज खाते रहने से स्वास्थ्य में दिक्कत आने की सम्भावना है। आधुनिक स्वास्थ्य विज्ञान भी कहता है-- रोज कार्बोहाइड्रेट, चीनी, चावल, मैदा खाने से मधुमेह, उच्चरक्तचाप और हृदय रोग बढ़ रहे हैं।

परम्परा के अनुसार उपवास के साथ-साथ मन के उपवास पर जोर दिया है। मन के उपवास का मतलब है- अच्छा सोचो, अच्छा करो, अच्छा लिखो।

राजसी व तामसी भोजन से दूर रहो।

हमारे संस्कार हमें तमाम रोगों से बचाते ही नहीं रोग होने ही नहीं देते।

हर दो मास में ऋतु बदलती है। हर महीने मास बदलता है। हमारे संस्कार कहते हैं कि हमें इस परिवर्तन के हिसाब से अपना खान-पान बदलते रहना चाहिए। केवल जीभ के स्वाद को प्रसन्न करने के लिए Cold Storage से निकली फल-सब्जी कभी नहीं खानी चाहिए।

फाल्गुन मास में नमक व खट्टा कम खाना चाहिए।

पूर्णिमा के दिन रक्तचाप ऊपर-नीचे होता है। गुस्सा बढ़ता है।

मौसम के अनुसार प्रसाद स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर बनाया जाता है।

जो फल पेड़ों से मिलते हैं उन फलों में कोलेस्ट्रॉल नहीं होता। इसलिए हम भगवान को फल भेंट करते हैं और प्रसाद के रूप में खाते हैं। फलों को इसी कारण स्वास्थ्य के लिये सबसे अधिक जरूरी माना गया है।

जो चीजें भगवान को भोग में अर्पण नहीं की जातीं, उन्हें कम खाना चाहिए।

जो चीजें जमीन के अन्दर से मिलती हैं उन्हें भगवान को अर्पण नहीं करते, कम खाना चाहिए। जैसे मूली, अदरक आदि।

भारतीय संस्कारों, पूजा विधियों पर ही आधारित है विश्व संगठन, खान-पान पर दिशानिर्देश। हम उन संस्कारों को भूल चुके हैं। उन पर अमल करना, स्वास्थ्य का सुनहरी वरदान है। वैदिक संस्कारों के अनुसार जीवन जीने के संस्कारों को पुनजीर्वित करना आतंकवाद से निपटने से कहीं अधिक महत्त्वशाली है।

अब घरों में हवन होने बन्द हो गए हैं, जिस कारण मलेरिया और डेंगू जैसे घातक ज्वरों का प्रकोप बढ़ रहा है। हम घर में हवन किया करें, तो इन रोगों से बच्चों को बचाया जा सकता है। मच्छर ही नहीं रहेंगे तो रोग क्यों होंगे?

हवन सामग्री के धुएँ से दमा रोग नहीं होता। हवन के धुएँ से वातावरण शुद्ध होता है, प्रदूषित नहीं।

हवन को संस्कारों का केन्द्र मानें तो कह सकते हैं कि हवन में रोगों को भस्म करने या उन्हें भगाने की ताकत है।

एक संस्कार यह भी है कि अतिथि के आने पर हम उनका स्वागत गुड़-पानी से करते हैं। आयरन की कमी से होने वाले रोगों से बचने के लिये सप्ताह में एक बार गुड़ जरूर खाना चाहिए। महिलाएं खून की कमी से ग्रसित रहती हैं, गुड़ खाकर खून की कमी से बचाव किया जा सकता है। आज अनीमिया के इलाज के रूप में Iron की गोली फैशन बन गई है। हर संस्कार वैज्ञानिक आधार पर खरे उतरते हैं।

पी. 65, पाण्डव नगर, मयूर विहार-1
दिल्ली-110091

☞ *पृष्ठ 6 का शेष*

आर्य समाज का...

के मुकाबले में दिव्य पुरुषों के अवतरण की अवधारणा को जन्म देकर मानवी संघर्ष और पुरुषार्थ की ही अवहेलना की है। जबकि समाज और संसार में कठिन संघर्ष सदैव सत्पुरुषों ने ही किया है, उन्हीं को श्रद्धापूरित होकर पौराणिक ने अवतारवाद का आश्रय लेकर परमेश बना दिया। उन्हें महापुरुष अथवा अपने पूज्य पूर्वज मानकर ही हम उनके जीवन व्यवहार और कुशल कार्यकलाप से सद् प्रेरणा और सद्शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। लेकिन अवतार बनाकर पुरोहितों ने उनको हमारे लिये अगम्य बना दिया। हाँ, इस ब्याज से उन्होंने अपनी आजीविका का प्रस्तर-पूजन के माध्यम से अनवरत उद्योग अवश्य ही कर लिया है। लेकिन आर्यसमाज के समाज-सुधार आन्दोलन की एकपक्षीय आलोचना करने के बजाय आज उसके सर्वांश में पुनर्मूल्यांकन की भी महती आवश्यकता है।

वरिष्ठ प्रवक्ता : हिन्दी विभाग
गो.ग.द.स. धर्म कॉलेज, पलवल।

वेदो में पर्यावरण संरक्षण

● सुशील वर्मा

आज का प्रज्वलन्त विषय वातावरण व पर्यावरण शुद्धि सभी को चिन्तित किए हुए है। जहां वैज्ञानिक उन्नति हुई वहीं हम प्रकृति का साथ छोड़ उससे दूर होते जा रहे हैं। स्वार्थ के कारण वातावरण को दूषित कर रहे हैं। किसी को यह चिन्ता नहीं कि हमारे अनुचित कृत्यों से पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। अपने को विकासशील बनाने के लिए औधोगिक क्षेत्र में जितनी तेज़ी से प्रगति कर रहे हैं उतने की प्राकृतिक संसाधनों को तीव्रगति से नष्ठ कर रहे हैं। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, भूमि प्रदूषण आदि विकट समस्याएं खड़ी कर रहे हैं। पैट्रोल व डीज़ल से चलित–वाहन, कारखानों से निकलने वाला धुआं व रासायनिक जलादि, वायु को दूषित करने में कोई कमी नहीं छोड़ी जा रही इन मंत्रों द्वारा हमें सचेत किया जाता रहा है कि कोई ऐसा कार्य न करें जिसमें वायु अशुद्ध हो।

यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः।
तेन नो देहि जीवसे।। ऋक् 10.186.6

पर्यावरण के संघटक तत्व तीन हैं–जल, वायु और औषधियां। ये मनुष्य को प्रसन्नता प्रदान करते है। अथर्ववेद में इनके लिए कहा गया है।

त्रीणि छन्दांसि कवयो वि येतिरे, पुरुरूपं दर्शनं विश्वचक्षणम्।
आपो वाता ओषधयः, तान्येकस्मिन् भुवन आर्पितानि (अथर्व 18.1.17)

यजुर्वेद का भी आदेश है कि जल को प्रदूषित न करें, वृक्ष वनस्पतियों को न काटें

माऽणे हिंसीः मा ओषधीर्हिसी। यजु.6.22

अपः पिन्व, औषधिर्जिन्व। यजु 14.8

जल को शुद्ध रखें और वनस्पतियों और औषधियों और को जल आदि से पुष्ट करें। जल अमृत है औषधि है, अत्तम वैद्य है, हृदय रोग एवं आनुवशिंक रोग की भी चिकित्सा है।

अप्सु अन्तर्विश्वानि भेषजा। आपश्च विश्वभेषजी ऋग 1.23.20

आपः भिषजां सुभिक्तमा, (अथर्व 6.24.2)

आपो–हृदृद्योतभेषजम्। अथर्व 6.24.1

वेदों ने वृक्ष एवं वनस्पतियों को पर्यावरण का एक अभिन्न अंग स्वीकार किया है क्योंकि वे हमें जीवन शक्ति प्रदान करते हैं। जीवित रहने के लिए आक्सीजन अति आवश्यक है जिसकी पूर्ति वृक्ष एवं वनस्पति करते हैं– **"प्राणों वै वनस्पति"** (ऐतरेय 2/4)

आज वैज्ञानिक कह रहे हैं कि प्रदूषण के कारण ओजोन परत में भी छिद्र हो गए हैं। इसके लिए हम ही जिम्मेवार है। क्योंकि ओजोन परत सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणों (Ultraviolet Rays) को रोक कर पृथ्वी के पेड़ पौधों तथा जीव जन्तुओं को भस्म होने से बचाती है। द्यू और भू को हमारी संस्कृति माता पिता मानती है। क्योंकि ये हमारे रक्षक व पालक हैं, अतः ये माता पिता तुल्य हैं। इनकी रक्षा करना और इन्हें प्रदूषण मुक्त रखना हमारा कर्तव्य है।

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः अथर्व 12.1.12

पृथिवी माता, द्यौष्पिता यजु 2.10.11

कहाँ तो हम कहते आए हैं कि पृथिवी हमारी माता है हम उसके पुत्र हैं और कहां हम इसका खनन करके व खाद्यानों की पूर्ति हेतु रासायनिक खादों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग कर मृदा मिट्टी को प्रदूषित कर रहे हैं। इसकी उर्वरा शक्ति एवं जलधारण करने की क्षमता नष्ट कर रहे हैं।

ऋग्वेद का कथन है वृक्षों को न काटें – **'मा काकम्बीरम् उद्वृहो वनस्पतिम्'** (ऋक् 6.418.17) और फिर आगे कहा कि वृक्ष लगाओ, इनकी सुरक्षा करो क्योंकि ये जलों के स्रोतों की रक्षा करते हैं।

वनस्पति वन आरथापयध्वं। निषू दधिध्वम् अरवनन्त उत्सम।।ऋग 10.101.11

हमारी वनस्पतियां, वृक्ष, औषधियां यदि हरी भरी हैं तो हमारा जीवन भी हरा भरा रहेगा। ज्ञातव्य है कि वृक्षों में हरियाली अवितत्व (Chlorophyll) के कारण होती है। अवि शब्द रक्षार्थक अव् धातु से बना है अर्थात वृक्षों की रक्षा अवितत्व के कारण ही है। वेदों ने पर्यावरण घटकों के संरक्षण हेतु विभिन्न उपायों का निर्देश दिया है। उनमें से प्रथम उपाय यज्ञ है। यज्ञ की हवि पर्यावरण तत्वों को शुद्ध करती है।

"अविर्वै नाम देवता–ऋतेनास्ते परीवृता।।
तस्या रूपेणेमे वृक्षा हरित हरितस्रजं।। अथर्व 10.8.31

शतपथ ब्राह्मण में तो वृक्ष वनस्पतियों औषधियों को पशुपति कहा गया है यजुर्वेद के 16वें अध्याय में शिव को वृक्ष, वनस्पति वन औषधि आदि का स्वामी बताया गया है। शिव विषपान करते बताए जाते हैं और अमृत प्रदान करते हैं–वही कल्याणकारी शिव है। यही तो शिव का शिवत्व है–विषपान करना और अमृत प्रदान करना। वृक्ष वनस्पति कार्बनडाइक्साइड Co_2 रूपी विष ग्रहण करते हैं और आक्सीजन रुपी अमृत प्राणवायु देते हैं। वृक्षों को रूद्र रुप अर्थात इस शिव का रुद्ररूप इसलिए कहा है कि जब वृक्ष वनस्पतियां नहीं रहेंगी तो आक्सीजन नहीं मिलेगी और यही विनाश का कारण बनेगी।

वृक्षाणां पतये नमः औषधीनां पतये नमः यजु. 16/17–19

समस्त संसार आज पर्यावरण प्रदूषण से चिन्तित है परन्तु प्रकृति का फिर भी हम पर उपकार है कि वह समय समय पर वायु शोधन आदि द्वारा अपना योगदान देती रहती है अन्यथा अब तक तो वायुमण्डल इतना प्रदूषित हो गया होता कि सांस लेना भी दूभर हो जाता। अग्निहोत्र उस परमपिता द्वारा रचाए गए प्राकृतिक यज्ञ का ही स्वरूप है। वेद यज्ञ धूम को वायु की शुद्धि का हेतु मानता है।

वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् – यजु 1/3

महर्षि दयानन्द सरस्वती यजुर्वेद भाष्य में लिखते है "जैसी यज्ञ के अनुष्ठान से वायु और वृष्टि जल की उत्तम शुद्धि और पुष्टि होती है, वैसी दूसरे उपाय से कभी नहीं हो सकती"

पुणें के सातवें प्रवचन में 20 जुलाई 1875 को उन्होंने कहा था

1. पुष्टि वर्धन, सुगन्ध प्रसार और नैरोग्य ये तीन उपयोग होम अर्थात हवन करने से होते हैं।

2. सुवृष्टि और वायु शुद्धि होम हवनादि से होती है इसलिए होम करना चाहिए।

इसी की पुष्टि हेतु वे लिखते हैं "जब तक होम करने का प्रचाार रहा, तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था, अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए" वेद अग्निहोत्र को वर्षा में भी सहायक मानता है। यजुर्वेद में यज्ञ को **वर्षवृद्धम्** (1.16) वर्षा को बढ़ाने वाला कहा है इसी प्रकार अथर्ववेद (4.15.16) कहा है **"तन्वतां यज्ञं बहुधां विसृष्टा"** अर्थात् जब वर्षा करवाने की आवश्यकता हो तब बहुत से यज्ञ विविध प्रकार से करने चाहिएँ।

गीता में भी स्पष्ट रुप से वर्णित है

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्याद्दन्नसम्भवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः।। गीता 3/14

अर्थात यज्ञ से मेघ, मेघ से वर्षा, वर्षा से अन्न की उत्पत्ति होती है।

वैज्ञानिक परीक्षणों से आज सिद्ध है कि अग्निहोत्र से कुछ ऐसी गैसें निकलती हैं जो वातावरण को शुद्ध करती हैं और प्रदूषण नष्ट करती हैं इनमें कुछ गैसे Elhylene Oxide, Propylene व Aldehydes & Ketones आदि हैं।

अतः अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, चकवात बाढ़, आदि की समस्याओ का हल केवल मात्र यज्ञ है। आज सौर ऊर्जा को हम बहुत कम प्रयोग कर रहे हैं यदि यही ऊर्जा पेट्रोल और डीजल के स्थान प्रयोग की जाए तो प्रदूषण कहां से फैलेगा। इसी प्रकार अधिक आक्सीजन देने वाले पेड़ जैसे पीपल, बरगद और तुलसी, नीम जैसे औषधिदायक वृक्ष हमारी इस प्रक्रिया में सहायक होगे। यही सब उपाय पर्यावरण के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे। स्वामी जी का वचन ***"वेदों की ओर लौट चलो"*** सत्य मार्ग की ओर अग्रसर करेगा और हम हमारी पृथिवी, जल, वायु आदि की रक्षा कर पाऐंगे यही एक रास्ता है, सुपथ, सन्मार्ग है।

गली मास्टर मूल चंद वर्मा
फाजिल्का–152123 (पंजाब)

☞ *पृष्ठ 4 का शेष*

अब तक तो धरती यहीं ...

हम उनको तुम्हारा वह पत्र दे देंगे। तुरंत लिख दो ताकि हम अविलम्ब वापिस लौट जाएं और महाराज को तुम्हारे वध का समाचार दे दें। भोज ने बहुत सोच–समझ कर वह 'श्लोक' लिखा जिसको मैंने शीर्षक में संदर्भित किया है, जिसमें मुञ्ज की 'लोभ भावना' पर बड़ा करारा व्यंग्य था और जिसे पढ़कर मुञ्ज को अपनी भूल का बड़ा दुःखदायी अहसास हुआ, वह फूट–फूट कर रोया और जल्लादों से कहने लगा कि मेरा भोज मुझे वापिस लाकर दो। पहले देखिए वह श्लोक क्या कहता है–

मांधाता च महीपति कृतयुगालंकारभूतो गतः,
सेतुर्येन महोदधौ विरचितः क्वासौ दशास्यान्तकः।
अन्य च युधिष्ठिर प्रभृतयो याता दिवं भूपते,
न केनापि समं गता वसुमती, मुञ्ज!
त्वया–यास्यति।।

अर्थात्

सतयुग भूषण मांधाता महीपाल भी
आखिर चले गये,
लंकेश सहांरक रामबली भी काल के
हाथों छले गये,
कर्ण, युधिष्ठिर, भीम गये, यह बात
किसी से छुपी नहीं आज तलक
धन दौलत, धरती साथ किसी के गई नहीं,
कहे भोज, हे मुञ्ज चचा तू नया कमाल
दिखाएगा
अब तक तो धरती यहीं रही तू साथ
इसे ले जायेगा।

मुञ्ज, त्वया यास्यति।। यह था लोभ का विकार और आगे उसका डरावना, दुष्परिणाम– अपने प्रिय, पुत्रवत् भतीजे भोज के वध का आदेश। इस 'पाप' का 'बाप' था मुञ्ज के मन में पैदा हुआ सत्ता का लोभ, राज–गद्दी के प्रति लालच। जनश्रुति

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

टी.वी. सीरियल में प्रतिमाओं का पूजन एवं चमत्कार का प्रदर्शन

● हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

ऋषि दयानन्द प्रतिमा पूजन के विरोधी थे, इसलिये कि जो सर्वत्र व्यापक है उसकी प्रतिमा नहीं बन सकती। शक्तियों की मूर्ति नहीं होती और न शक्तियाँ मूर्ति से उत्पन्न होती हैं। वायु एक शक्ति है किन्तु उसे हम किसी मूर्ति के आकार में गढ़ नहीं सकते। शक्तियों की मूर्ति बनाना मानव की एक कल्पना है।

ईश्वरीय सृष्टि में पंचतत्व एवं सूर्य चन्द्रादि से हम सभी को जीवन प्राप्त होता रहता है– किन्तु मूर्तियों से हम लोगों को प्राण प्राप्त नहीं होता। भक्त लोग समझते हैं कि इन्हीं मूर्तियों में देवी–देवता और ईश्वर बसते हैं, ऐसा ही उनका विश्वास हैं, इसी विश्वास के साथ लोग उन देव–देवी ईश्वरीय शक्तियों का कोई शिव, विष्णु, श्री गणेश, काली, दुर्गा माता आदि के नाम से पूजा पाठ करते हैं, दूर–दूर से आकर भोग चढ़ाते, मन्नत करते, मन्दिरों में दीपक जलाते हैं, घड़ी घन्ट बजाते, फूलों की माला और चन्दन लगाते हैं, इसके अलावा सोने–चाँदी के अलंकार से उन्हें सजाते और हजारों–लाखों के नकदी दान देते हैं। ऐसे कितने लोग धर्म तत्व को न जानने वाले, बुद्धिमान होते हुए भी इस सम्बन्ध में अनजान, सही पद्धति के प्रतिकूल कार्य करते हैं।

इस मूर्ति को लेकर श्री नारायण प्रसाद 'बेताब' का एक ज्ञानवर्धक भजन है:–

'अजब हैरान हूँ भगवन, तुम्हें कैसे रिझाऊँ मैं,

न कोई वस्तु ऐसी है जिसे सेवा में लाऊँ मैं।।

करूँ किस तरह आवाहन कि तुम सर्वत्र व्यापक हो,

निरादर है बुलाने को अगर घन्टी बजाऊँ मैं।।

तुम्हीं हो मूरती में भी तुम्हीं व्यापक हो फूलों में,

भला भगवान को भगवान पर कैसे चढ़ाऊ मैं।।

लगाना भोग कुछ तुमको ये एक अपमान करना है,

खिलाता है जो सब जग को उसे कैसे खिलाऊँ मैं।

तुम्हारी ज्योति से रोशन हैं सूरज चाँद अरु तारे,

महा अन्धेर है तुमको अगर दीपक जलाऊँ मैं।।

भुजायें हैं न गरदन है, न सीना है न पेशानी,

तू है निर्लेप नारायण कहाँ चन्दन लगाऊँ मैं।।

बड़े नादान हैं वे जन जो गढ़ते आपकी सूरत,

बनाया विश्व को तुमने तुझे कैसे बनाऊँ मैं।।

जैसा कर्म किया गया है अथवा किया जा रहा है, ईश्वरीय नियम के अनुसार उन्हें वैसा ही फल मिलने वाला है। विधाता के आगे किसी का वश नहीं चलता, कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है, चाहे किसी भी देवी–देवता के आगे सर पटकिये, मन्नत कीजिये, जो होने वाला है वही होता है। कितने ही लोग तीर्थ स्थानों में जाकर देवी–देवताओं की मन्नत करके वृद्ध हो गये, पर न सन्तान लाभ हुआ न गूंगा बोल सका न जन्मान्ध देख सका, इसके अलावा न सुगर कमा, गठिया का रोग ठीक हुआ, और न अस्मादि रोग ही ठीक हुआ, इन सब रोगों के लिये डाक्टर के यहां जाना ही पड़ता है।

जितना धनिक लोग 'तिरुपति बाला जी के मन्दिर एवं सतसाई आदि को (सोने, चांदी–हीरे जवहरात से) करोड़ों का चढ़ावा चढ़ाते हैं, उसका आधा भाग यदि धर्मशाला, अनाथालय में गरीबों को भोजन कराने, वस्त्रदान और अस्पतालों में जो गरीब वर्ग बीमार हैं उनके ऊपर खर्च करें तो इससे उन सबको बहुत पुण्य मिले। साँई बाबा दूसरों को उपकार और भला करते थे, और अनेक नामों से एकेश्वर का ध्यान करते थे। अतः भक्तों को चाहिये कि वे भी औरों का उपकार करें और परमपिता परमात्मा को समझें। ऋषि दयानन्द सत्य के समर्थक थे, और अष्टांग योग द्वारा सत्य ईश्वर का ही ध्यान करते थे, और औरों को भी उपदेश देते थे कि वे भी योगशास्त्र के अनुसार एकेश्वर प्रणव का ही जप ध्यान करें।

मन्नत आदि के संस्कार को मन से हटाना होगा क्योंकि बिना डाक्टर चिकित्सा के केवल मन्नत से कोई रोग ठीक नहीं होता। 'हवन' आदि के 'टीवी' सिरियल में शिवादि मूर्तिपूजा से चमत्कार का प्रदर्शन से लोगों में प्रतिमा पूजन की भावना को और भी बढ़ावा मिल रहा था। (अब उस चमत्कार दिखलाने वाले 'हरिओम्' सीरियल को बन्द कर दिया गया है।

पुरोहित का मत – देखिये देव–देवी की प्रतिभा के प्रति लाखों रुपये और सोने चाँदी के चढ़ावा इसलिये चढ़ाते हैं कि उनकी मनोकामना अथवा उनका कोई असाध्य रोग ठीक हो जाता होगा, ऐसे कोई मन्नत पूरा नहीं करता।

उत्तर – किसी की मनोकामना का पूर्ण हो जाना अथवा किसी रोग पा लेना, यानि निःसंतान को संतान प्राप्त हो जाना, यह सब भोग समय की समाप्ति और अटल विश्वास का फल है। जो मन्नत करते हैं उनके मन में पूर्ण विश्वास हो जाता है कि अमुक देव या देवी की महिमा से यह ठीक हो जायेगा, यह उनका विश्वास सही शक्ति रूप बनकर उनके मनोरथ को पूर्ण करने में सहायक बन जाता है।

जैसे 'हिम्मते मर्द मर्दे खुदा', की कहावत सत्य है उसी प्रकार देव देवी की प्रतिमा को निमित्त मात्र हैं, असल में उनकी विश्वास की शक्ति ही काम करती है। ईश्वर से की प्रार्थना में भी वहीं श्रद्धा और विश्वास की शक्ति काम करती है। एक बार ऋषि दयानन्द से मुन्शीराम ने भी कहा था, कि आपकी तर्कना शक्ति तो प्रबल है, पर ईश्वर की कोई हस्ती है, ऐसा विश्वास हमें नहीं दिलाया, ऋषि ने कहा "श्रद्धा की वेदी पर विश्वास का दीपक जलाओ, परमात्मा का साक्षात्कार हो जायेगा।' इस मानसी दीक्षा ने उन्हें स्वामी श्रद्धानन्द बना दिया। इससे सिद्ध हो जाता है कि तन मन से श्रद्धा और दृढ़ सकल्प ही सफलता की मूल कुंजी है।

एक रोगी को डाक्टर ने कहा कि आपको नींद की गोली दे दी है आप सो जाइयेगा, उस रोगी को पूर्ण विश्वास हो गया कि मैंने तो नींद की गोली खा ली है, अब तो जाऊँगा और वह सो गया, किन्तु डाक्टर ने उसे नींद की गोली नहीं दी थी, यह है विश्वास का प्रभाव।

एक बार रामकृष्ण परमहंस जगल में ध्यान कर रहे थे उस सम उनका भगिना वहाँ पहुँच गया और पूछा मामा आप मंदिर में माँ के सामने ध्यान न करके जंगल में क्यों? उत्तर में रामकृष्ण परमहंस बोले– अरे माँ क्या मंदिर में ही होती है, वह सर्वत्र है, जो सर्वत्र है उसका हम कहीं भी ध्यान कर सकते हैं। **"या देवी सर्वभतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता, सर्वव्यापी जगत् जननी"** जो सर्वव्यापी है उसकी प्रतिमा कैसे बन सकती है? किन्तु 'क' को समझने के लिए जैसे कबूतर का चित्र बनाया जाता है, परन्तु 'क' अक्षर नहीं बन सकता वैसे ईश्वर का ज्ञान कराने के लिए 'ओम्' (प्रणव) का नाम स्वर में लिखा जाता है किन्तु ओम् न किसी की मूर्ति है न वह प्रतीक स्वयं ईश्वर है। इसी प्रकार मूर्ति का आकार ईश्वर नहीं है, उसका आकार तो इतना विराट् और अनन्त है जिसे किसी भी रूप में गढ़ा नहीं जा सकता।

श्रीगणेश, काली, दुर्गा आदि की प्रतिमा वर्ष में एक बार बनाते हैं, उनके बनाने पण्डाल आदि में लाखों रुपया खर्च करते हैं। उन सब में प्राण प्रतिष्ठा कराते हैं। उसके बाद पूजा पाठ करते हैं उत्सव ढाक ढोल बजाते हैं और अंत में जल में विसर्जन कर देते हैं।

मुसलमान लोग बिना किसी प्रतिमा के ईद पर्व के दिन 'ईद दरगाह में सब एकत्रित होकर नमाज पढ़ते हैं और सब परस्पर गले मिलते हैं।

आर्य लोग वर्ष में अनेक बार सामूहिक रूप से सब एकत्रित होकर यज्ञ करते हैं। तब परस्पर मिलते हैं। यज्ञ का सुगन्ध और वेद मंत्र की ध्वनि से वरुण देव प्रसन्न होते हैं। आक्सीजन का शोधन होता है, तदुपरान्त वृष्टि कारक यज्ञ से वृष्टि भी होती है– **"वृष्टिश्च में यज्ञेन कल्पन्ताम्** (यजु:18–11) वशो पृश्निर्भूत्वा दिवंगच्छतो नो वृष्टिमावह। (यजु. 2–16)

अर्थात्–जब जब हम कामना करें, वर्षा हो। यज्ञ के द्वारा हमारी वृष्टि समर्थ, सम्पन्न हो– हमारी यज्ञ की आहुति अन्तरिक्ष में जाकर वृष्टि का लावें।

अतः यज्ञ से अनेक उपकार होता है। पहले ऋषि लोग अनेक प्रकार की सामग्रियों से यज्ञ किया करते थे। 5013 वर्ष पूर्व महाभारत एवं गीता में कहीं भी मूर्ति पूजा का नाम नहीं है। रामायण काल में भी आर्य और ऋषि लोग सन्ध्योपासना और अग्निहोत्र किया करते थे।

योगीराज श्रीकृष्ण ने गीता में स्वयं कहा है कि–

'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुनतिष्ठति, भ्रामयनसर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।। (18,61)

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत, तत्प्रसादात् परां शान्ति–स्थानं प्राप्स्यसिशाश्वतम्।। (18,62)

हे अर्जुन! शरीर रूप यन्त्र में आरुढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अन्तर्यामी परमेश्वर अपनी माया से उनके कर्मों के अनुसार भ्रमाता हुआ सब भूतप्राणियों के हृदय में स्थित है।

हे भारत! सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही शरण को प्राप्त हो। उस परमात्मा की कृपा से ही परम शान्ति और सनातन स्थान परम–धाम को प्राप्त होगा।

श्रीकृष्ण पांडवों के दूत बनकर जब हस्तिनापुर जा रहे थे तो मार्ग में ऋषियों के आश्रम में विश्राम करके प्रातः सन्धावंदन किया–

कृत्वा पौर्वाहिन्कं कृत्यं स्नातः

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

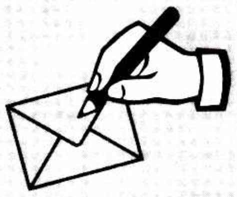

पत्र/कविता

मनुर्भव

केवल सूरत ,शक्ल, आकृति, मानव की होने से।
कोई मनुज, मनुज नहिं होता, मनुष्य योनि होने से।।

उसे मनुज वत गुण एवं आचरण हि मनुज बनाते।
ये गुण ही व्यवहार जगत् में ''मानव–मूल्य कहाते''।।

मानवीय मूल्यों को जीवन में प्रतिष्ठापित करके।
ही मानव, मानव जीवन का परम लक्ष्य पा सकते ।।

''सतनिष्ठा, सुधि, प्रेम, दया, करुणा विनम्रता, शुचिता।
क्षमा, मैत्री, सदाचार, संतोष, धैर्य,गुण ग्रहिता–।।

त्याग और सेवा प्रभृति गुण इसी कोटि में आते।
जो मनुजों को अन्य प्राणियों से उत्कृष्ट बनाते।।

इन्हीं गुणों से व्यवहारिक रिशतों का ताना बाना।
बुनते हुऐ प्रकाशमय वैदिक पथ प्रशस्त रख पाना।।

ताकि अन्य जन इसी मार्ग का लेकर के अबलम्बन।
उलझनमय मग छोड़तरे, अनयों का करते तारण।।

ऋषि–मुनि कृत ये शुचि–श्रुति पथ जब से हमने विसराया।
भ्रष्टाचार, अनीति, स्वार्थ, तम–तमस पाशविक छाया।।

घोटालों पे घोटाले चहु ओर नजर जो आते।
मानवीय मूल्यों को ना अपनाने से ही आते।।

''जब भी जागे तभी सबेरा'' समझ सजगता लाऐं।
मानवीय मूल्यों को निष्ठा सहित सभी अपनाऐं।।

तो ये धरती ''स्वर्गादपि गरीयसी'' स्वमेव बनेगी।
यत्र तत्र सर्वत्र विविध सुख सम्पति अमित झरेगी।।

दयाशंकर गोयल
1554 डी. सुदामा नगर, इंदौर
पिन – 452009 (म.प्र.)

बिन लगाम के घोड़े

महान पर्व महाशिवरात्रि बोधरात्रि इस साल भी आयी और चली गयी। लगता है कुतुबमीनार की उँचाई पर चढ़कर पुनः धरती पर आ गये। धूल में सने से लगते हैं। पर्व से पहले काफी बरसात हुई। बाढ़ आयी! घर डूब गये। खेती नष्ट हो गयी। नदी–नाले और जलाशयों में पानी भर आया। मोरिशस स्थित पवित्र तालाब, गंगा तालाब भी लबा लब भर गया। पूजा स्थान डूब गये।

घुटने के लगभग पानी में उतरना पड़ा। मंदिर परिषद् के कर्मचारीगण भी विचलित हो गये। टाई लगाकर प्रेस वार्त्तायें हुईं। यह भी कहा गया कि गंगा तालाब से पानी पंप करके बाहर निकालना होगा। वह तो प्राकृतिक झील है। उसकी गहराई का पता नहीं कितने स्रोत हैं यह भी नहीं मालूम। पानी निकलने का रास्ता भी नहीं दीखता तो पानी को कैसे निकाला जाय? कोई उत्तर नहीं है। हर साल चेतावनी दी जाती है बड़ा काँवड़ न बनायें। रास्ते में कठिनाई होती है। ट्राफिक जाम में पाँच –छः घंटे फंसे रहते हैं। आज भी कोई सुन नहीं रहा है। मानो कुत्ता चले बाजार हाथी दहाड़े हजार। इस साल तो चोरी का मामला भी सामने आया है। महिलाओं के गहने आदि मेले में गायव कर दिये गये हैं। 108 फुट का मंगल महादेव अन्य देवी देवता और और हाल में स्थायी 108 छोटे शिवलिंग स्थापित है। कुछ काम नहीं कर रहे हैं। शिव जी के तीसरे नेत्र को छोड़िये दोनों चर्म चक्षु भी बंद लगते हैं। तो भक्तों का क्या होगा? पूरे शिव की पूजा न कर कब तक लिंग को सहलाते रहेंगे। मधु, दूध, दही, घी और चीजों से। हर साल वही प्रक्रिया। इससे ऊपर कब उठेंगे। महाशिवरात्री के बाद व्रत तोड़ने की भी प्रथा ज़ोर पर है। सात्विक भोजन को छोड़ ताषसिक आहार का सेवन करते हैं।

एक और घटना–इस मार्च को महाशिवरात्री थी। अस्पताल जाना था कोई बीमार था। क्या देखते हैं कि एक 'मिसियों साली गेरिज़ों' ईसाइयों का एक संगठन है जो हिन्दुओं को बहकाकर अपने संगठन में शामिल कर लेते हैं। अपनी पूजा छोड़कर उसमें प्रवेश कर जाते हैं। हां एक व्यक्ति सभी बीमार के पलंग के पास जाकर प्रार्थना करता है कि वे अच्छे हो जाये। वह व्यक्ति लगातार अस्पताल आता है और अपना करता रहता है। कुछ लोग बहक ही जाते हैं। दिन दिहाड़े घर–घर घूम कर प्रचार करते हैं। पुस्तिकासयें बांब्ते फिरते हैं। शोचनीय अवस्था है। हमारे पंडित्–पुरोहित आचार्य मंदिर में हैं। पूजा स्थल पर हैं। गंगा तालाब और अन्य जगहों पर बैठे हैं। भगवान से मिलाने के बिचौलिये का काम कर रहे हैं। और यहाँ उनके अपने कई लोग ठग–ठग कर ईसाई बनाने पर तुले हैं। आज किसी पण्डित, पुरोहित या आचार्य को घर–घर घूमते नहीं देखा गया। पूछे तो कहते हैं हम अधिक है, धार्मिक हैं पता नहीं क्या–क्या हैं। पता नहीं कहाँ तक वे सही हैं या नहीं। अपने यजमानों को ठग तो नहीं रहे हैं। जड़ छोड़कर डाली को तो नहीं सींच रहें हैं?

गंगा तालाब का जल कितना पवित्र है? सोचना है। पानी उमड़ा है। घुटने तक पानी में खड़े होकर पूजा करते हैं। पूजा सामान लेकर जाते हैं। उसी पानी में थाली टांग लेते हैं। लोटे में वही पानी भरते हैं। पान के पत्तों पर कपूर जलाकर पानी में बहा देते हैं। जाते–जाते वह भी डूब जाता है या किनारा पकड़ लेते हैं। फूल, फूल और सामग्रियाँ भी पानी में ही विसर्जित करते हैं। पवित्रता की मिसाल है या मशाल लेकर तालाब में डूब रहे है। टी. वी. पर सीधा प्रसारण चलता है। गैर हिन्दू हमारी पवित्रता को कितना पवित्र मानते होंगे। सोचने की बात है।

बोधरात्रि की झलक पाते हैं। फिर भी अपनी चाल पर ही चलते जाते हैं। महर्षि दयानन्द का सच्चा शिव इस संसार में तो नहीं मिलेगा। कब तक भटकते और भटकते रहेंगे। समय बतायेगा। शिव की पूजा करते–करते शव न बनकर रह जायें।

सोनालाल नेमधारी
कारोलिन, बेल–एर
मोरिशस

****

ईश्वर से सच्ची लगन लगाये

'आर्य जगत' पेपर बहुत ही अच्छा लगता है इसमें कितने ही सारगर्मित लेख होते हैं जो हमें विविध प्रकार का ज्ञान देते हैं।

सोनालाल नेमधारी जी से प्रार्थना है कि मोरशिस में हिन्दी को ही बढ़ावा दें, अन्य भाषाएं तो समय के साथ सब सीख लेते हैं।

''प्रतिमाओं की धमकी, प्रतिमाओं में चमकी'' देवनारायण भारद्वाज का लेख बहुत सुन्दर लगा।

जो लोग आर्य समाज के महान शिल्पी रहे उनके परिवारों के बारे में कुछ जानने को मिले कि उनके सदस्यों में आज भी वह तप, त्याग, लगन है जो हमें मार्ग दिखाए। ईश्वर की दया और गुरुदेव दयानन्द का आशीर्वाद हम समाजियों को सच्ची लगन लगाये।

–गौरी जंगपुरा, दिल्ली

****

☞ पृष्ठ 9 का शेष

टी.वी. सीरियल में ...

शुचिरलंकृत:। उपतस्थे विवस्वतं पावकं च जनार्दन:।।
अग्निं प्रदक्षिणं कृत्वापश्यन् कल्याण मग्रत:।। (महा. उद्योग.अ.83)

श्रीकृष्ण ने दैनिक स्नानादि कार्यों को करके प्रात:कालीन सन्ध्यावन्दन तथा अग्निहोत्र किया। तत्पश्चात् आश्रम के ऋषियों से कल्याणप्रद उपदेश सुना।

प्रस्तुत प्रमाणों से स्पष्ट है कि जब श्रीराम और श्रीकृष्ण स्वयं ईश्वर की उपासना करते थे तो फिर वह ईश्वर कैसे हो सकते हैं?

जब राम के नाम के साथ सीता, तो कृष्ण के साथ रुक्मिणी को क्यों नहीं जोड़ा गया? उनकी विवाहिता पत्नी की उपेक्षा और तिरस्कार क्यों किया गया? यह उनके जीवन चरित्र के साथ किया गया बहुत बड़ा अपराध है। क्या यह उनके चरित्रों के खिलवाड़ नहीं?

इसी प्रकार भक्त लोग धर्म के सत्यार्थ को न जानकर, जहाँ किसी का संयोगवंश उपकार हुआ नहीं कि सब कोई उस स्थान में जाने लगते हैं। धीरे–धीरे कुछ दिन में वहाँ पत्थर रखकर सिंदूर से टीका गया था, मन्दिर बन जाता है और लोग वहाँ जाकर पूजा एवं मन्नत करने लगते हैं। पुजारियों के लिए वह स्थान एक और नया दान–दक्षिणा से कमाने का मार्ग खुल जाता है।

आजकल बहुत से साधु–सन्त, ओझा–गुणी, कुछ चमत्कार का जादू दिखाकर लोगों को धर्म के नाम पर धन कमाने का ज़रिया बना लिये हैं। इनके जाल से बचना चाहिये।

मु.पो. मुरारई,
जिला वीरभूम
(प. बंगाल) 731219

प्रि. चित्रा नाकरा जी की इज़रायल यात्रा

प्रख्यात् शिक्षाविद्, वैदिक संस्कृति एवं मूल्यों के प्रति अगाध–निष्ठावान, शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रपति पदक तथा अन्य अनेकों पुरस्कारों एवं सम्मानों से विभूषित वेदव्यास डी.ए.वी स्कूल की प्रधानाचार्या ''श्रीमती चित्रा नाकरा जी'' इजरायल सरकार के विशेष अनुरोध पर भारत सरकार द्वारा भेजे गए प्रतिनिधि मण्डल की सदस्य बनी जिन्होंने इज़राइल की विशेष शैक्षणिक यात्रा की। उनेक अनुसार इज़रायल के लागों के हृदय में भारत देश के प्रति अपार सम्मान एवं स्नेह के भाव विद्यमान है। यहूदी समुदाय स्वयं को भारतीय वंश सम्राट 'यदु' का वंशज अनुभव करता है।

अपनी संस्कृति एवं मूल्यों के रक्षण में इज़रायल के लोग सतत् क्रियाशील हैं, वह जागे हुए योद्धाओं का देश है उनमें राष्ट्रप्रेम तथा देश भक्ति कूट–कूट कर भरी हुई है। वहाँ के लोग अपनी संस्कृति, सभ्यता तथा भाषा पर गर्व का अनुभव करते हैं। 'हिब्रू' वहाँ की राष्ट्रभाषा है जो वैदिक भाषा के अति निकट है। उन लोगों ने अपने बलबूते पर रेगिस्तान के बंजर–बीहड़ों को शस्य श्यामला भूमि में परिवर्तित कर दिया। वेअपने संयन्त्रों से सागर के खारे पानी को मीठे पानी में बदल कर अपने देशवासयों की प्यास बुझा रहे हैं। हरित गृहों (ग्रीन हाऊस) में वे फल–फूल अनाज आदि का अति वैज्ञानिक विधि द्वारा उत्पादन करते हैं। वहाँ का बच्चा–बच्चा अपनी पुरातन संस्कृति तथा अपने शहीदों पर देवताओं की तरह गर्व अनुभव करता हुआ उनके पदचिन्हों पर चलकर अपने देश को स्वाभिमान एवं स्वतन्त्रता के दिव्य शिखरों पर सुशोभित करना चाहता है। इज़रायल से हमारे देशवासी अनुशासन, कर्त्तव्यनिष्ठा, देश भक्ति तथा विपरीत परिस्थितियों में भी जीवित रहने के लिए अदम्य जिजीविषा की शक्ति और शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

प्रि चित्रा नाकरा जी जो आर्य समाज की प्रधाना भी हैं ने वहाँ आयोजित सेमीनार में वेद की पवित्रतम ऋचा ''शांन्ति मन्त्र'' का पाठ किया तथा उसकी शिक्षाओं पर अपने विशेष विचार रखे जिसे सुनकर सारा प्रतिनिधि मण्डल तथा इज़रायलवासी लोग भावविभोर हो गये। दस दिन की यात्रा से प्राप्त अनुभव सुख, शान्ति, समृद्धि अदम्य साहस, शौर्य तथा देशभक्ति की भावनाओं को प्रखरतम बनाती रहेंगे।

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय ने किया संस्कृत सम्भाषण शिविर का आयोजन

हरियाणा संस्कृत अकादमी, पंचकूला एवं दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार के संयुक्त तत्त्वावधान में नि:शुल्क दस दिवसीय संस्कृत सम्भाषण शिविर का आयोजन किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता साहित्य रत्न 'राज्य कवि उदय भानु हंस जी' ने की। मुख्य अतिथि पं. मदन गोपाल शास्त्री और विशिष्ट अतिथि पं. दयानन्द शास्त्री थे। हंस जी ने अपने आशीर्वचन में कहा:

तुम विष को सुधा सोम बनाओ तो सही।
तुम सीमा को कमी व्योम बनाओ तो सही।।
देखो तुम सभी में अपना ही रूप।
पहले अहं को ओ३म् बनाओ तो सही।।

इस अवसर पर गजलकार श्री महेन्द्र जैन ने माँ के महत्व पर एक गजल सुनाई। डॉ. प्रमोद योगार्थी ने बताया कि इस शिविर दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार के साथ–साथ दूसरे स्कूल, कॉलेज के छात्रों ने भी भाग लिया। श्री अजय एलावादी एडवोकेट ने कहा कि संस्कृत लुप्त होती जा रही है परन्तु संस्कृत अकादमी पंचकूला एवं दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार द्वारा किये जा रहे संस्कृत संरक्षण के कार्य बहुत ही सराहनीय हैं।

इस अवसर पर शहर के प्रतिष्ठित संस्कृत प्रेमी आर्यजन भी उपस्थित थे। प्राचार्य डॉ. दलीप खर्ब, श्री राधेश्याम शुक्ल, श्री राम कुमार आर्य, महात्मा अतर सिंह स्नेही, प्रमोद लाम्बा, विनय मल्होत्रा,

कैलाश शास्त्री, वेदमनु शास्त्री, समाजसेवी कुलदीप अग्रवाल, विजेन्द्र शास्त्री, शिवानी, दीपचन्द शास्त्री, ललित कुमार पनसौत्रा, संजय बंसल आदि महानुभाव उपस्थित थे।

☞ पृष्ठ 8 का शेष

अब तक तो धरती यहीं ...

है कि मुञ्ज ने जल्लादों को अभयदान दिया, जल्लाद भोज को वापिस लाये, मुञ्ज ने उसको सीने से लगाया, उसको राज्य सौंपा और स्वयँ (मुञ्ज) तप करने जंगल को प्रस्थान कर गये और आने वाली पीढ़ियों के लिये छोड़ गये एक संदेश कि 'लोभ' पाप का मूल है, पतन का 'हाईवे' है, मानवता को कलंकित कर देने वाले काले कारनामों का एकमात्र कारण है। सबके लिए कल्याणी, पुनीत वेदवाणी ने तो सृष्टि के आदि में ही सावधान कर दिया था–

जो कुछ दीख रहा जगती में, सब में ईश समाया है,
त्याग भाव से जीवन जीना, यह ढलती, फिरती छाया है।
मोह–ममता के वशीभूत क्यों करता मेरा–मेरा है,
भूल गया कि जगत् बावरे चिड़िया रैन बसेरा है।
अति लोभ में कभी ने फंसना ऋषियों ने फरमाया है,
किसके साथ गई बोलो नश्वर माया और काया है।

(द्रष्टव्य ईशोपनिषद् प्रथममंत्र)

आइए, हम लोभ के विषांकुर को अपने मन में से उखाड़ फैंकें, लोभ–दैत्य को निर्ममतापूर्वक कुचल–मसल कर मार डालें और इस प्रकार पूर्णतया निष्पाप होकर पावन पवित्र जीवन जीयें। लोभ–पाप का बाप है, पाप हमसे कुकृत्य करवाता है, जीवन को दु:खों से भर देता है। हम लोभ से बचें, दु:खों से बचना आसान हो जाएगा।

1607/7 जवाहर नगर,
पटियाला चौंक,
जींद (हरियाणा) –126102

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 03-04/04/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

बी.बी के डी.ए.वी. यासीन रोड अमृतसर में महर्षि दयानन्द का जन्म उत्सव

बी.के.डी.ए.वी पब्लिक स्कूल, यासीन रोड में योगऋषि महर्षि दयानन्द जी का जन्मोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया गया।

इसका आयोजन व संयोजन " आर्य सद्‌भावना सत्संग समिति" अमृतसर की संचालिका डॉ. स्वामी मधुरानन्द जी ने किया। इसमें विद्यालय की प्रधानाचार्या मैडम नीना बत्तरा जी तथा सभी अध्यापकों ने सहयोग दिया।

कार्यक्रम का प्रारम्भ हवन यज्ञ से हुआ। हवन में मुख्य यजमान श्रीमति और श्री सतीश सूद, श्रीमती नीलम कामरा और आर्य श्री मति निशि शर्मा,सर्व श्री हीरा लाल, सुरेन्द्र खोसला, अनु खुराना, श्री पद्म जी, ज्योति निर्मल सेठ, डा. आशीष जी, ऋच्चा जी आदि उपस्थित थे।

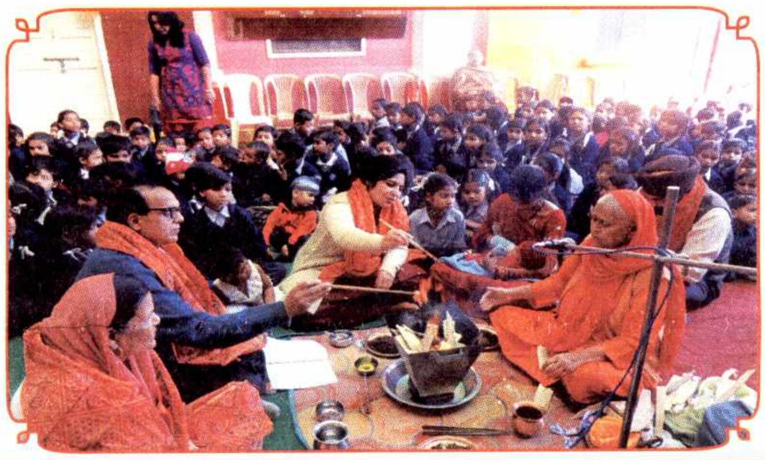

हवन के पश्चात् लघु नाटिका प्रस्तुत की गई। छात्रों द्वारा प्रस्तुत "नाटक जिसमें महर्षि दयानन्द जी के जीवन से मृत्यु तक की घटनाओं को पेश किया गया।

मैडम नीलम कामरा जी ने कहा कि हमें महर्षि दयानन्द जी द्वारा बताए गए सत्मार्ग पर चलते हुए उनके द्वारा जलाई ज्योति को प्रज्ज्वलित करते रहना चाहिए।

स्कूल की प्रधानाचार्या मैडम नीना बत्तरा जी ने अपने विचारों में कहा कि हम सभी बहुत ही भाग्यशाली है जो महर्षि दयानन्द जी के नाम से चल रही संस्थाओं में काम कर रहे हैं।

अंत में तथा उन अध्यापकगणों तथा छात्रों को स्मृति चिन्ह प्रदान किए गये जिनका जन्मदिवस मार्च मास में आता है।

सी.एफ. डी.ए.वी. में जल संरक्षण सप्ताह

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं युवा समाज के तत्वावधान में सी. एफ. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल गड़ेपान में प्रोजेक्ट बूँद 2013 के तहत जल संरक्षण सप्ताह मनाया गया। इस प्रोजेक्ट को विद्यार्थयों के माध्यम से समाज के लिए प्रेरणा स्रोत बनाने के लिए जल संरक्षण सप्ताह के अंतर्गत विभिन्न गतिविधियों का आयोजन किया गया। विद्यालय में विज्ञान विषय की अध्यापिकाओं द्वारा जल सरंक्षण के महत्व पर प्रकाश डाला गया तथा कक्षा एक से तीन तक के विद्यार्थियों द्वारा " पानी के विभिन्न स्रोत" विषय पर विभिन्न

कलाकृतियां बनाईं व जल संरक्षण पर स्लोगन लिखे जिनमें *"पियो हमेशा शुद्ध जल, रहो स्वस्थ हर पल", जल बचेगा तो कल बचेगा", "जल बचेगा तो कुल बचेंगे", "जल की एक एक बूंद बचाओ मिलकर खुशहाल देश बनाओ"* आदि स्लोगन प्रमुख थे। कक्षा छः से आठ तक के विद्यार्थियों द्वारा पोस्टर तैयार किये गये जिनकी विषय वस्तु भी जल संरक्षण पर आधारित थी। बालकों ने विद्यालय पांगण में रैली व मानव श्रृंखला द्वारा जल संरक्षण के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दोहराई। विद्यार्थयों को संबोधित करते हुए विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती अंजू उतरेजा ने *"जल है तो कल है"* की व्याख्या करते हुए जल की उपयोगिता व महत्व को बताया और बालकों को जल संरक्षण के लिए प्रेरित किया।

डी.ए.वी. टोहना में स्वामी दयानन्द के उपकारों को याद किया गया

डी.ए.वी. सीनियर सैकेण्डरी स्कूल टोहाना में स्वामी दयानन्द सरस्वती जयंती एवं बोधोत्सव को उल्लास पूर्वक मनाया गया। सामाजिक बुराईयों, मूर्ति पूजा, नारी उत्थान, हेतु आज भी स्वामी जी के दिशा निर्देश उतने ही युक्तिसंगत हैं जितने कि स्वामी जी के समय में थे। इन्हीं मुद्दों को छोटे-छोटे बच्चों ने एक लघु नाटिका के द्वारा मंचन करके दिखाया। विद्यार्थियों व अध्यापकों द्वारा स्वामी जी के जीवन पर आधारित भजन व गीतों द्वारा एवं विभिन्न वक्ताओं द्वारा अपने विचार प्रस्तुत करके स्वामी जी को नमन किया।

इसके साथ-साथ समस्त जगत की सुख-शांति के लिए यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें प्राचार्या सहित विद्यार्थियों ने आहुतियां प्रदान कीं।

विद्यालय प्राचार्या डॉ. श्रीमती माला उपाध्याय ने उपस्थित जनसमूह को सम्बोधित करते हुए कहा स्वामी दयानंद युग पुरुष थे, उन्होंने अपना सारा जीवन समाज की सेवा में न्यौछावर कर दिया। यही कारण है कि आज स्वामी जी हमारे जीवन के आदर्शों में जीवित हैं। हमें अपना जीवन महापुरूषों की शिक्षाओं पर आधारित रखना चाहिए। उपस्थित जनसमूह ने कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

डी.ए.वी. दरीबा (राजसमन्द)...

पहुँची।

जल रथ पर बनाई गई वेदी में यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें स्थानीय लोगों एवं अभिभावकों ने आहुतियाँ देकर पर्यावरण को शुद्ध करने एवं जल संरक्षण करने का संकल्प लिया।

रैली की सफलता पर प्राचार्य श्री दिव्येन्दु सैन शर्मा ने हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, स्थानीय लोगों अभिभावकों विद्यालय के समस्त कर्मचारियों तथा बालकों का आभार व्यक्त किया।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**